All Subject to Patiala Jurisdiction.
साप्ताहिक कृषि समाचार-पत्र
मूल्य : 6/- रुपए
खेती संदेश
Postage Registered No. PB/PTA/0339/2025-2027
WEEKLY KHETI SANDESH
E-mail : khetisandesh2025@gmail.com
Chief Editor : Parminder Kaur • RNI Regd. No. PBBIL/25/A0210 • Issue Dt. 22-12-2025 • Vol.1 No.18 • H.O. : # 9-A, Ajit Nagar, Patiala-147001 (Pb.) • Mob. 90410-14575 • Page 12

पंजाब में घटता जा रहा है खेतीबाड़ी के लायक भूमि का एरिया, हरियाणा में बढ़ रहा है फसलों का रकबा

पंजाब में कृषि योग्य भूमि का रकबा घटता जबकि हरियाणा में बढ़ता जा रहा है। राज्यसभा में सामने आई जानकारी के मुताबिक 2019-20 से 2023-24 तक पंजाब में कुल खेती लायक क्षेत्र 12,000 हैक्टेयर कम हो और इसी दौरान हरियाणा में यह 59,000 हैक्टेयर बढ़ गया है।

केन्द्रीय कृषि राज्यमंत्री रामनाथ ठाकुर ने राज्यसभा सदस्य ए.ए. रहीम के एक सवाल के जवाब में राज्यसभा में एक लिखित जवाब में यह जानकारी दी है। सांसद रहीम ने देश के हर राज्य के लिए कुल खेती लायक क्षेत्र के कम होने का मुख्य कारण और खेती की ज़मीन के नुकसान को रोकने के लिए सुधार के कदमों के बारे में पूछा था।

राष्ट्रीय स्तर पर खेती का क्षेत्र स्थिर

मंत्री ने अपने लिखित जवाब में कहा कि पंजाब में कुल खेती लायक क्षेत्र 2019-20 में 42.38 लाख हैक्टेयर से घट कर 42.32 लाख हैक्टेयर हो गया। यह 2021-22 में कुछ कम होकर 42.25 लाख हैक्टेयर हो गया और 2023-24 में थोड़ा बढ़ कर 42.26 लाख हैक्टेयर हो गया। हरियाणा में 2019-20 में कुल खेती लायक एरिया 37.94 लाख हैक्टेयर था, जो 2020-21 और 2021-22 में बढ़ कर 38.47 लाख हैक्टेयर हो गया, 2022-23 में बढ़ कर 38.50 लाख हैक्टेयर और 2023-24 में 38.53 लाख हैक्टेयर तक पहुंच गया। मंत्री ने आगे कहा कि लेटेस्ट सालाना पब्लिकेशन 'लैंड यूज स्टैटिस्टिक्स : ए ग्लांस 2023-24' से पता चलता है कि राष्ट्रीय स्तर पर कुल खेती लायक क्षेत्र स्थिर रहा है।

फसल की तीव्रता में लगातार सुधार

अलग-अलग कार्यक्रम और योजनाएं लागू होने की वजह से कुल फसल वाला क्षेत्र काफी बढ़ा है, जो 2013-14 में 201.3 मिलियन हैक्टेयर से बढ़ कर 2023-24 में 217.8 मिलियन हैक्टेयर हो गया है। मंत्री ने आगे कहा कि मॉडर्न टैक्नोलॉजी अपनाने और असरदार पॉलिसी दखल से फसल की तीव्रता में भी लगातार सुधार हुआ है, जो 2013-14 में 142.5 फीसदी से बढ़ कर 2023-24 में 156.8 फीसदी हो गई है। कई फसलें उगाने के तरीकों की ओर एक अच्छा बदलाव दिखाता है और किसानों की एक ही ज़मीन पर साल में एक से ज्यादा बार खेती करने की बढ़ी हुई क्षमता को दिखाता है।

बंजर ज़मीन को किया जाना चाहिए विकसित

मंत्री ने कहा कि केन्द्र सरकार ने ज़मीन अधिग्रहण, पुनर्वास और फिर से बसाने में सही मुआवजा और पारदर्शिता का अधिकार एक्ट, 2013 तैयार किया था, जो 1 जनवरी, 2014 को लागू हुआ था। इस एक्ट के तहत सार्वजनिक कामों के लिए ज़मीन ली जा सकती है। मंत्री ने कहा कि एक्ट का सैक्शन 10-ए साफ तौर पर कई फसलों वाली सिंचाई वाली ज़मीन के अधिग्रहण पर रोक लगाता है, जब तक कि कुछ खास मामलों में कोई दूसरी ज़मीन उपलब्ध न हो। ऐसे मामलों में खेती के लिए उतनी ही बंजर ज़मीन को विकसित किया जाना चाहिए।

पिछले 10 साल में पंजाब में 1 लाख हैक्टेयर से ज्यादा कृषि योग्य भूमि घटी

एक मीडिया रिपोर्ट के मुताबिक पंजाब में कृषि योग्य भूमि घट रही है, जिसका मुख्य कारण शहरीकरण, भू-क्षरण और बाढ़ जैसी प्राकृतिक आपदाएं हैं, जिससे पिछले एक दशक में खेती की ज़मीन कम हुई है और मिट्टी में रेत जमा होने जैसी समस्याएं बढ़ गई हैं। शहरों का विस्तार होने से कृषि भूमि पर इमारतें बन रही हैं, जिससे खेती के लिए ज़मीन कम हो रही है। पिछले 10 सालों में कृषि योग्य 1.13 लाख हैक्टेयर से ज्यादा ज़मीन कम हुई है।

कुल खेती लायक क्षेत्र (लाख हैक्टेयर में)

राज्य	2019-20	2020-21	2021-22	2022-23	2023-24
पंजाब	42.38	42.37	42.25	42.25	42.26
हरियाणा	37.94	38.47	38.47	38.50	38.53

अत्याधिक सिंचाई और रासायनिक उर्वरकों के इस्तेमाल से मिट्टी की गुणवत्ता खराब हो रही है, जिससे भूमि बंजर हो रही है। इसरो की रिपोर्ट के अनुसार करीब 3.3 प्रतिशत ज़मीन (1.68 लाख हैक्टेयर) इस समस्या से प्रभावित है।

हाल की बाढ़ों ने 4 लाख एकड़ से ज्यादा फसल बर्बाद की और खेतों में मिट्टी की जगह रेत जमा हो गई, जिससे खेती करना मुश्किल हो गया है। धान और गेहूं पर ज्यादा निर्भरता और पानी की कमी भी एक बड़ी समस्या है, जिससे पानी की कमी और भूमि की उर्वरता घट रही है। इन समस्याओं के कारण किसानों की आय कम हो रही है, क्योंकि उन्हें कम उपज और कम दाम मिल रहे हैं। इससे खाद्य सुरक्षा पर असर पड़ रहा है, क्योंकि पंजाब देश का एक बड़ा खाद्यान्न उत्पादक है।

रबी फसलों की बुवाई में तेजी, 85% रकबा कवर

देश में रबी सीजन ने रफ्तार पकड़ ली है। कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय के ताजा आंकड़ों के मुताबिक, सामान्य रबी क्षेत्रफल के करीब 85 प्रतिशत हिस्से में बुवाई पूरी हो चुकी है। पिछले साल की तुलना में रबी फसलों का कुल रकबा 4.5 प्रतिशत बढ़ा है। अनुकूल मौसम, पोस्ट-मानसून की अच्छी नमी और गेहूं के न्यूनतम समर्थन मूल्य में बढ़ोतरी ने किसानों का भरोसा मजबूत किया है, जिसका सीधा असर बुवाई की गति पर दिख रहा है।

12 दिसंबर तक देश में रबी फसलों की बुवाई 536.76 लाख हैक्टेयर क्षेत्र में हो चुकी है, जबकि एक साल पहले इसी अवधि में यह आंकड़ा 512.76 लाख हैक्टेयर था। बीते 10 वर्षों का औसत (नॉर्मल) रबी रकबा 637.81 लाख हैक्टेयर है, जिसके मुकाबले मौजूदा सीजन में अब तक लगभग 85 प्रतिशत कवरेज हासिल कर लिया गया है।

रबी सीजन में गेहूं की बुवाई सबसे आगे रही है। गेहूं का रकबा 6.5 प्रतिशत बढ़कर 275.66 लाख हैक्टेयर पहुंच गया है, जो पिछले साल 258.48 लाख हैक्टेयर था। गेहूं का सामान्य रकबा 312.25 लाख हैक्टेयर माना जाता है। आईसीएआर- इंस्टीट्यूट ऑफ व्हीट एंड बार्ले रिसर्च के अनुसार, पोस्ट-मानसून नमी के कारण खेतों की स्थिति अनुकूल बनी रही, जिससे बुवाई सुचारू रही। हालांकि, पंजाब और हरियाणा के कुछ इलाकों में देर से धान कटाई और अधिक बारिश के चलते सीमित देरी देखने को मिली। केंद्र सरकार द्वारा गेहूं के एम.एस.पी. में 160 रुपये की बढ़ोतरी कर इसे 2,585 रुपये प्रति क्विंटल करने का फैसला किसानों के लिए बड़ा प्रोत्साहन साबित हुआ है। इसके साथ ही पोस्ट-मानसून बारिश भी रबी बुवाई के लिए सकारात्मक रही। 10 दिसंबर को समाप्त सप्ताह तक पोस्ट-मानसून वर्षा सामान्य से 20 प्रतिशत अधिक दर्ज की गई। उत्तर-पश्चिम भारत में 62 प्रतिशत और मध्य भारत में 39 प्रतिशत अधिक वर्षा हुई, जिससे मिट्टी में पर्याप्त नमी बनी रही।

दलहन फसलों का कुल रकबा मामूली रूप से 1.5 प्रतिशत बढ़कर 117.11 लाख हैक्टेयर हो गया है। चना, जो रबी की प्रमुख दलहन फसल है, का रकबा लगभग 4 प्रतिशत बढ़कर 84.91 लाख हैक्टेयर पहुंच गया है, जबकि पिछले साल यह 81.67 लाख हैक्टेयर था। चने का सामान्य रकबा 100.99 लाख हैक्टेयर है। मसूर का रकबा थोड़ा बढ़ा है, लेकिन अरहर, उड़द, मूंग, कुल्थी और मटर जैसी अन्य दलहनों का क्षेत्रफल घटा है। रबी सीजन में चावल की बुवाई अभी शुरुआती चरण में है, लेकिन रकबा 16 प्रतिशत बढ़कर 12.44 लाख हैक्टेयर हो गया है, जो पिछले साल 10.64 लाख हैक्टेयर था। आने वाले हफ्तों में इसमें और तेजी आने की उम्मीद है। न्यूट्री-सीरियल्स में मक्का का रकबा 11.5 प्रतिशत बढ़कर 15.60 लाख हैक्टेयर हो गया है। जौ की बुवाई भी करीब 5 प्रतिशत बढ़कर 6.78 लाख हैक्टेयर पहुंची है। हालांकि ज्वार और बाजरा का रकबा घटा है, जबकि रागी में बढ़ोतरी दर्ज की गई है। तिलहनों में कीमतें एम.एस.पी. से नीचे रहने के बावजूद सरसों की बुवाई में 4 प्रतिशत से अधिक की बढ़त दर्ज की गई है। सरसों का रकबा 84.67 लाख हैक्टेयर पहुंच गया है, जो न केवल पिछले साल से ज्यादा है बल्कि इसके सामान्य रकबे 79.17 लाख हैक्टेयर से भी ऊपर निकल चुका है। वहीं मूंगफली, तिल और अलसी का रकबा घटा है, जबकि सूरजमुखी और कुसुम (सैफ्लावर) की बुवाई में इजाफा हुआ है।

कपास किसानों की बढ़ती चुनौतियां

भारत में कच्चे कपास के आयात पर पहले 5 फीसदी मूल सीमा शुल्क, 5 फीसदी कृषि अवसंरचना और विकास उपकर तथा इन दोनों पर 10 फीसदी सामाजिक कल्याण अधिभार, यानी कुल मिलाकर 11 फीसदी का सीमा शुल्क लगता था। फरवरी, 2021 में किसान आंदोलन के बाद देश के कपास किसानों के हित को ध्यान में रख कर यह शुल्क लगाया गया था। मगर अब सरकार ने कपड़ा उद्योग की मांग पर कच्चे कपास के आयात पर सभी सीमा शुल्क में 19 अगस्त, 2025 से छूट दे दी है।

अमरीकी कृषि विभाग ने बाकायदा बयान जारी करके इसे महत्वपूर्ण कदम बताया और कहा कि इससे अमरीकी कपास का भारत में निर्यात बढ़ेगा। इस निर्णय से भले ही अमरीका को फायदा हो, लेकिन देश के किसान इससे आहत हैं। महत्वपूर्ण बात यह है कि आयात शुल्क उस वक्त खत्म किया गया, जब भारतीय किसानों की कपास की नई उपज बाज़ार में आने ही वाली थी। अब विदेश से बड़े पैमाने पर कपास आने से घरेलू कपास की कीमतें गिर जाएंगी।

अधिसूचना जारी होने के दिन भारतीय कपास निगम यानी 'कॉटन कार्पोरेशन ऑफ इंडिया' (सी.सी.आई.) ने कपास की कीमत 600 रुपए प्रति कैंडी (एक कैंडी - 356 किलोग्राम) कम कर दी और उसके दूसरे दिन फिर 500 रुपए प्रति कैंडी कम कर दी। इस तरह महज 10 दिनों के भीतर ही कपास के न्यूनतम मूल्य में कुल 1700 रुपए प्रति कैंडी की कमी खुद सरकार की ओर से की गई।

पहले अमेरिकी कपास का सबसे बड़ा आयातक चीन था, लेकिन डोनाल्ड ट्रम्प की शुल्क नीति के कारण चीन वहां से कपास का आयात कम करता जा रहा है। इसलिए अमेरिका को एक वैकल्पिक बाज़ार की तलाश थी, जो उसे भारत में नज़र आ रहा था। हालांकि, भारत दुनिया का दूसरा सबसे बड़ा कपास उत्पादक देश है और यहां घरेलू खपत कुल उत्पादन की औसतन 95 फीसदी है। मगर यहां उच्च गुणवत्ता वाले या ज्यादा लंबे रेशे वाले कपास (ई.एल.एस.) की पैदावार कम होती है और उसकी जरूरत को आयात के जरिए पूरा किया जाता है।

दरअसल, उच्च गुणवत्ता वाले या अति लम्बे रेशे के कपास के आयात पर से 11 फीसदी शुल्क सरकार ने 20 फरवरी, 2024 से

आर. के. विश्वकर्मा

समाप्त कर दिया, लेकिन इससे छोटे रेशे के कपास आयात पर शुल्क जारी था, जिसे इस वर्ष अगस्त में खत्म किया गया।

कपास से सीमा शुल्क हटाने को लेकर जारी बयान में कपड़ा निर्माताओं और उपभोक्ताओं के हितों की बात तो कही गई थी, लेकिन कपास किसानों का जिक्र करना सरकार भूल गई। दूसरी बार जारी बयान में कहा गया कि भारतीय कपास निगम लिमिटेड द्वारा संचालित न्यूनतम समर्थन मूल्य व्यवस्था के माध्यम से किसानों के हितों की रक्षा की जाती है, जो यह सुनिश्चित करती हे कि किसानों को उनकी उत्पादन लागत से कम से कम 50 फीसदी अधिक मूल्य प्राप्त हो।

अब यहां दो बातें है : पहली यह कि सरकार कपास का न्यूनतम समर्थन मूल्य कितना तय करती है और दूसरी यह कि इस मूल्य पर सरकार किसानों से कितना कपास खरीदती है। सरकार न्यूनतम समर्थन मूल्य का निर्धारण ए-2 एफ.एल. फार्मूले के आधार पर करती है। इसके अनुसार मध्यम रेशे की कपास का न्यूनतम समर्थन मूल्य वर्ष 2024-25 के लिए 7,121 रुपए प्रति क्विंटल निर्धारित किया गया है। मगर किसान संगठनों की मांग है कि यह सी-2 फार्मूले के आधार पर निर्धारित किया जाना चाहिए, जिसके अनुसार यह मूल्य 10,075 रुपए प्रति क्विंटल होना चाहिए। न्यूनतम समर्थन मूल्य के निर्धारित के लिए

सी-2 का फार्मूला डॉ. एम.एस. स्वामीनाथन ने सुझाया था।

भारत में कपास की खेती मुख्यत: लगभग 99 फीसदी खरीफ फसल के रूप में होती है, जबकि तमिलनाडु और उसके आस-पास के दूसरे राज्यों के कुछ हिस्सों में यह रबी की फसल है। भारत में लगभग 60 लाख किसान परिवार कपास की खेती से अपनी आजीविका चलाते हैं। इसके अतिरिक्त 4.5 करोड़ दूसरे लोग भी इसके व्यापार से जुड़े हैं।

यहां पिछले वर्ष कुल 114.47 लाख हैक्टेयर कृषि योग्य ज़मीन पर कपास की खेती की गई, जो पूरी दुनिया में कपास की खेती के रकबे 314.79 लाख हैक्टेयर का 36.36 फीसदी है। रकबे के लिहाज से भारत पूरी दुनिया में पहले स्थान पर है और उत्पादन के मामले में चीन के बाद दूसरे स्थान पर है। मगर यहां प्रति हैक्टेयर कपास की पैदावार (437 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर) विश्व की औसत पैदावार (833 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर) से काफी कम है।

पिछले 10 वर्षों में सरकार ने न्यूनतम समर्थन मूल्य पर कपास की खरीद पर कुल 1,17,348.13 करोड़ रुपए खर्च किए। यह एक निवेश की तरह है, सी.सी.आई. किसानों से कपास खरीद कर उसे बाज़ार में बेचती है। मगर किसानों की आर्थिक स्थिति लगातार बिगड़ती जा रही है। इस साल के पहले 3 माह में महाराष्ट्र के विदर्भ क्षेत्र के करीब 767 किसानों ने आत्महत्या कर ली। बीते दशक में कपास का कुल उत्पादन 3370.72 लाख गांठें (एक गांठ-170 किलोग्राम) रहा और न्यूनतम समर्थन मूल्य पर कुल खरीद मात्र 380.58 लाख गांठें थीं।

इस तरह कपास का प्रति वर्ष औसत उत्पादन रहा 337 गांठें और न्यूनतम समर्थन मूल्य पर खरीद केवल 38 गांठें, कुल उपज की मात्र 11.27 फीसदी कपास ही सरकार की ओर से खरीदी गई। यही नहीं, प्रति वर्ष कपास की खेती करने वाले लगभग 60 लाख किसानों में से केवल 7.88 लाख किसानों से ही न्यूनतम समर्थन मूल्य पर कपास की खरीददारी की गई। इन हालात में किसानों के हित की रक्षा कैसे होगी?

नूरपुर सेठां का किसान नवजोत सिंह कर रहा कृषि सहायक धंधा

ट्रेनिंग लेकर एक एकड़ से शुरू, अब 6 एकड़ में तालाब, सालाना 30 लाख रुपए की कमाई

आज के बदलते कृषि परिदृश्य में किसान पारम्परिक खेती के साथ-साथ ऐसे सहायक व्यवसायों का रुख कर रहे हैं, जो कम समय में अधिक आय दे सकें। इन्हीं में से एक है मछली पालन, जो तेज़ी से किसानों की पहली पसंद बनता जा रहा है। फिरोज़पुर ज़िले के नूरपुर सेठां गांव के युवा किसान नवजोत पाल सिंह (हनी) ने इसे व्यवसाय बना लिया है। वर्ष 2018 में शुरू किए गए इस धंधे से उन्हें सालाना 30 लाख रुपए तक की आमदनी हो रही है।

नवजोत पाल सिंह एक कृषि प्रधान परिवार से है, जहां उनके दादा और पिता पारम्परिक खेती करते आ रहे हैं। पढ़ाई पूरी करने के बाद वह भी खेती में हाथ बंटाने लगे। वह हमेशा सहायक कार्य की तलाश में रहे। इसलिए 2011 में उन्होंने बकरी पालन शुरू किया। इसमें मुनाफा तो था, परन्तु परिवार को पर्याप्त समय नहीं दे पाने के कारण उन्होंने इसे छोड़ दिया। वर्ष 2018 में कृषि विज्ञान केन्द्र, फिरोज़पुर के अधिकारियों सावन शर्मा व अन्य ने उन्हें खेती के साथ मछली पालन की सलाह दी। नवजोत बताते हैं कि उन्हें मछली पालन के बारे में बहुत कम जानकारी थी और शुरूआती दिनों में काफी दिक्कतों का सामना करना पड़ा। उन्होंने हार नहीं मानी और विभागीय प्रशिक्षण लेकर इस काम को पेशेवर तरीके से आगे बढ़ाया। उन्होंने एक एकड़ में मछली पालन शुरू किया। पहले ही साल अच्छा लाभ देख कर उन्होंने इसे धीरे-धीरे बढ़ाया और आज 6 एकड़ में मछली पालन कर रहे हैं। वह अपने फार्म में रोहू, कतला, ग्रास कॉर्प, मुरक और गोल्डन कॉमन कॉर्प जैसी किस्मों की मछलियों का पालन कर रहे हैं। वह बीज कोलकाता से मंगवाते हैं, जो पहले हवाई मार्ग से अमृतसर, फिर वहां से फिरोज़पुर लाया जाता है। मछलियां तैयार होने में लगभग 10 से 12 महीने लगते हैं, जिसके बाद इन्हें लुधियाना, जालंधर और बाहरी राज्यों में भेजा जाता है।

उनके अनुसार, पारम्परिक खेती में जहां एक एकड़ से लगभग एक लाख रुपए बचते हैं, वहीं मछली पालन में प्रति एकड़ दो से ढाई लाख रुपए का लाभ मिल जाता है।

उन्होंने बताया कि पिछले 9 वर्षों में प्रदेश और बाहर के अनेक किसान उनके फार्म का दौरा कर चुके हैं। सबसे अधिक खुशी तब होती है, जब कोई किसान उनसे काम सीखकर मछली पालन करता है।

तालाब के किनारे फल-सब्ज़ियों से भी आमदनी

नवजोत पाल सिंह प्रकृति प्रेमी भी है। उन्होंने तालाबों के किनारों पर छायादार और फलदार पेड़-पौधे लगाए हुए हैं। इनसे फार्म की सुंदरता भी बढ़ती है। इसके अलावा वह तालाबों के पास सब्ज़ियों की खेती भी करते हैं, जिससे उन्हें हर साल अतिरिक्त आय प्राप्त होती है।

मधुमक्खी पालकों के लिए नई समस्या
विदेशी लघु मधुकोशीय भृंग

डॉ. अभिषेक शुक्ला,
कीट विज्ञान विभाग, न.म. कृषि विश्वविद्यालय, वघई–394730
डॉ. जे.जे. पस्तागिया तथा एच.के. चौधरी, कीट विज्ञान विभाग, न.म. कृषि महाविद्यालय, नवसारी कृषि विश्वविद्यालय, नवसारी–396450

भारत मूलतः एक कृषि प्रधान देश है और विविध वनस्पतियों की दृष्टि से एक समृद्ध राष्ट्र है। हमारे देश की 80 प्रतिशत से अधिक जनता ग्रामीण क्षेत्रों में विकास करती है और कृषि तथा संबंधित उद्योगों जैसे डेयरी, मत्स्य पालन, मुर्गी पालन, रेशम कीटपालन और मधुमक्खी पालन से सम्बद्ध है और उन पर आंशिक रूप से निर्भर है। इन सभी कृषि आधारित उद्योगों में से मधुमक्खी पालन एक बहुत ही महत्वपूर्ण तथा असीम संभावनाओं से भरा कृषि उद्योग है।

शहद और उसके उत्पादों की बढ़ती मांग के कारण मधुमक्खी पालन एक अलग व्यवसाय के रूप में उभर रहा है। मधुमक्खी पालन से दो महत्वपूर्ण उत्पाद, शहद और मोम तथा अन्य उत्पाद जैसे मधुमक्खी विष, रॉयल जैली, प्रोपोलिस और पराग उत्पन्न होते है। मधुमक्खियों की एपिस प्रजाति दुनिया में लगभग 100 से 400 साल पहले विकसित हुई थी। इन मधुमक्खियों की सात विभिन्न प्रजातियां है। इनमें से चार प्रमुख और तीन गौण प्रजातियां है। चार मुख्य प्रजातियों में से दो पालतू और दो जंगली है। भारत एक ऐसा देश है, जहां तीन प्रजातियां स्थानीय थीं और चौथी यूरोपीय देश से आयातित की गई थी। एपिस वंश में चार मुख्य प्रजातियां शामिल है : इटालवी मधुमक्खी (एपिस मेलिफेरा), एशियाई मधुमक्खी (एपिस सेराना), पहाड़ी मधुमक्खी (एपिस डोरसाटा) और भौंरा (एपिस फ्लोरिया), जबकि गौण प्रजातियों वाली मधुमक्खी (ट्राइगोना प्रजाति) डंकरहित–मेलिपोना परिवार से संबंधित है। सभी जीवित जीवों के सामान, मधुमक्खियों पर भी कई प्रकार के शत्रुओं और परजीवियों द्वारा हमला किया जाता है, जो मधुमक्खी–पालन उद्योग में बाधा उत्पन्न करते है। इनमें प्रमुख तौर पर बड़ा मोम पतंगा (गैलेरिया मेलोनेला), छोटे मोमी पतंगा (अकोरिस ग्रिसेला), चींटियां (कैम्पोनोटस कम्प्रेसस, मोनोमोरियम एस.पी.पी.), ततैया (वेस्पा एस.पी.पी.) और छोटे विदेशी छत्तेदार कीट (एथिना टुमिडा), दो प्रकार की माइट यथा अंत: परजीवी स्वांश माइट (एकरापिस वूडी) और बाह्यपरजीवी, वैरोआ माइट (वैरोआ जैकबसन), छिपकलियां (कैलोट्स एस.पी. पी.), पक्षी, चूहे, स्कंक और भालू शामिल है। प्रस्तुत लेख में मधुमक्खी पालन के लिए नई उभरती समस्या विदेशी लघु मधुकोशीय भृंग (एथिना टुमिडा) के बारे में विस्तार से जानकारी देने का प्रयास किया जा रहा है, जो हमारे किसान भाईयों के लिए उपयोगी साबित होगा।

अंडा

सुंडी (ग्रब)

प्यूपा

वयस्क कीट

विदेशी लघु मधुकोशीय भृंग का परिचय : यह कीट अफ्रीका के सहारा क्षेत्र का मूल निवासी है तथा यह पहली बार अफ्रीकी इटेलियन मधुमक्खी प्रजातियों को नुकसान पहुंचाता हुआ पाया गया था। इस कीट ने मधुमक्खी–पालकों और वैज्ञानिकों का ध्यान आकर्षित किया है तथा इसके तेज़ी से फैलने के कारण अन्य देशों में इटेलियन मधुमक्खियों की कालोनीयों को भारी मात्रा में आर्थिक क्षति पहुंचाता पाया गया है। इस कीट की एशिया महाद्वीप में उपस्थिति सर्व प्रथम वर्ष 2021 में बांग्लादेश में दर्ज की गई थी, इसके बाद भारत वर्ष में 10 सितम्बर, 2022 को पश्चिम बंगाल के उत्तर 24 परगना ज़िले में इसकी उपस्थिति दर्ज की गई थी। इस प्रकार अब यह कीट हमारे देश भारत में भी प्रवेश कर चुका है और वर्तमान में इस कीट का उपद्रव हमारे देश के विभिन्न भागों में बड़ी ही तेज़ी से बढ़ रहा है। इस कीट के फैलाव इस कीट से प्रभावित क्षेत्रों से छत्तों के खरीद कर नए स्थानों में परिवहन करना इसके फैलाव को बढ़ाने में मदद कर रहा है। एक सर्वेक्षण और शोध के अनुसार, यह कीट मधुमक्खियों की अन्य प्रजातियों जैसे इटालियन मधुमक्खियों और एशियाई मधुमक्खियों दोनों को नुकसान पहुंचाता पाया गया है। इस शोध के दौरान मौनसून के मौसम में 30–75 प्रतिशत तक नुकसान देखा गया है। इस कीट का वयस्क कीट वर्ष भर मधुमक्खी के छत्ते और उसकी हर अवस्था को नुकसान पहुंचाया पाया जाता है। इस कीट के संक्रमण के कारण एशियाई मधुमक्खियां 2–7 दिनों के भीतर छत्ते को छोड़ देती है। इस कीट का प्रकोप मौनसून के दौरान अधिक होता है।

विदेशी लघु मधुकोशीय भृंग की पहचान, क्षति और जीवन–चक्र : वयस्क कीट छोटा, लाल–भूरा या काला, लगभग 3 मिलीमीटर चौड़ा तथा मधुमक्खी के आकार का लगभग एक–तिहाई होता है। इस कीट के अंडे सफेद रंग के होते हैं, जिनका आकार 1.4×0.26 मिलीमीटर तक होता है। इस कीट की सुंडियां आकार में छोटी होती हैं। ये क्रीम रंग के होते है तथा मोमीय पतंगे की सुंडियों के समान ही इस कीट की वयस्क मादाएं छत्ते की सतह पर, दरारों में तथा शिशु कक्ष में समूहों में अंडे देती हैं। मादा अपने पूरे जीवन काल में 1000–2000 तक अंडे देती हैं। इन अण्डों से 2–4 दिनों में शिशु निकल आते हैं। इस कीट के शिशु अपने आहार में शहद, पराग, मधुमक्खी के लार्वा और अंडों का भक्षण करते है। मुख्यत: 7–14 दिनों के बाद, वयस्क शिशु मधु–रस से दूर चला जाता है और उचित एवं उपयुक्त स्थान की तलाश में ज़मीन में कोष बनाता है। इस कीट के शिशु को एक महीने तक मधुमक्खियों के छत्तों को नुकसान पहुंचाते हुए भी देखा गया है। कीट 2–4 सप्ताह के बाद अपने कोकून से बाहर निकल आते है।

विदेशी लघु मधुकोशीय भृंग का नियंत्रण उपाय : इस कीट के उपद्रव को नियंत्रित करने और छत्ते को इस कीट की क्षति से मुक्त रखने के लिए मधुमक्खी पालकों के लिए निम्नलिखित सावधानियां अपनाना बहुत आवश्यक है :

* मधुमक्खी के बक्से को ज़मीन से 1–1.5 फीट ऊपर रखें।
* मधुमक्खी के बक्से को सूखे स्थान पर रखें।
* मधुमक्खी के बक्से की दरारें और छेद ठीक से सील करें।
* खाली छत्तों को हटा दें और बक्से में मधुमक्खियों की अधिकतम संख्या से भर कर रखें।
* वयस्क कीटों को हटाने के लिए क्षति ग्रस्त कालोनियों का धूम्रीकरण।
* मधुमक्खी के बक्सों को पॉलीथीन आवरण से ढंक कर रखना चाहिए।
* क्षतिग्रस्त बॉक्स से फ्रेम निकालकर दूसरे बॉक्स में रखें तथा खाली बॉक्स को धूप में रखें।
* कीट के वयस्क भृंगों को एकत्रित करके उनका नाश कर देना चाहिए।
* ऐसे पेड़–पौधे जिन पर इस कीट की सुंडियां रखी जाती है, तो उनको एकत्रित करके उनको नष्ट कर देना चाहिए।
* मधुमक्खियों को अधिक भोजन न दें अर्थात् सिरप न दें।
* मधुमक्खी पालन क्षेत्र के आस–पास की ज़मीन को कुछ समय तक जलमग्न रखने से जमीं में उपस्थित इस कीट के प्यूपा नष्ट हो जाते हैं।
* यह कीट मिट्टी में अपना प्यूपा बना कर रहता है, इसलिए पानी में कीटनाशक मिला कर मिट्टी पर छिड़काव करने से मिट्टी में रह रहे प्यूपा नष्ट किए जा सकते है।

कैटरपिलर द्वारा क्षति ग्रस्त हुए छत्ते

वयस्क कीटों द्वारा क्षति ग्रस्त हुए छत्ते

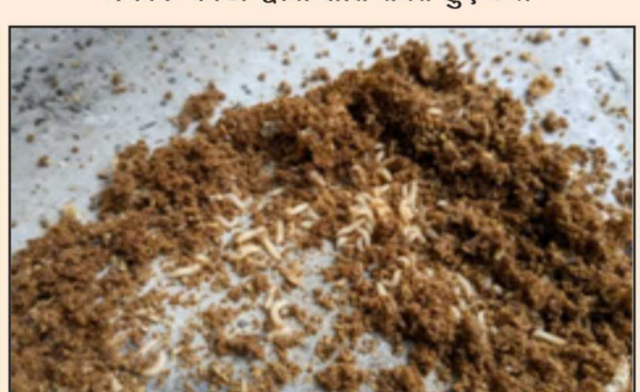
कैटरपिलर द्वारा क्षति ग्रस्त हुए छत्ते

खेती संदेश

KHETI SANDESH

मुख्य कार्यालय :
9–ए, अजीत नगर,
पटियाला–147001
(पंजाब)
मो. 98151–04575

कार्पोरेट कार्यालय :
के.डी. कॉम्पलैक्स, गऊशाला रोड,
नजदीक शेरे पंजाब मार्केट,
पटियाला–147001
(पंजाब)
मो. 90410–14575

वर्ष : 01 अंक : 18
तिथि : 22-12-2025

सम्पादक
परमिंदर कौर

सम्पादकीय बोर्ड
डॉ. डी.डी. नारंग
डॉ. जे.एस. डाल
डॉ. आर.एम. फुलझेले

Editor : **PARMINDER KAUR**
Printer, Publisher and Owner of Weekly **'KHETI SANDESH'** Printed at **Drishti Printers,** Dasmesh Market, Near Sher-e-Punjab Market, Gaushala Road, Patiala-147001 (Pb.) and published from **Kheti Sandesh**, House No. 9-A, Ajit Nagar, Patiala-147001 (Pb.). E-mail : khetisandesh2025@gmail.com Mob. 90410-14575, RNI No.**PBBIL/25/A0210**

हवा से आक्सीजन के अलावा भी मिलते हैं पोषक तत्व

एडवांस इन न्यूट्रिशन में प्रकाशित एक नए अध्ययन में वैज्ञानिकों ने लिखा है कि सांस के जरिए हमारे आहार में जिंक, मैंगनीज और आयोडीन जैसे जरूरी पोषक तत्वों को शामिल किया जा सकता है। हम प्रतिदिन लगभग 9,000 लीटर हवा का उपभोग करते हैं।

ताजी हवा सेहत के लिए फायदेमंद है, यह कोई नई बात नहीं है। हजारों सालों से विभिन्न संस्कृतियों ने प्रकृति और ताजी हवा को स्वास्थ्यवर्धक माना है। हरे भरे बगीचों में सैर करते हुए हम एक नई ताजगी महसूस करते हैं। ताजी हवा में हमारे लिए बहुत कुछ होता है। हम इसके लाभों से पूरी तरह से अवगत नहीं हैं। आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि मनुष्य हवा से भी कुछ पोषक तत्व ग्रहण कर सकता है और वैज्ञानिकों ने इस बारे में पुख्ता सबूत भी जुटाए हैं। सांस के जरिए लिए जाने वाले पोषक तत्व एयरोन्यूट्रिएंट्स (हवाई पोषक तत्व) कहलाते हैं जबकि आंतों द्वारा अवशोषित किए जाने वाले तत्वों को गैस्ट्रोन्यूट्रिएंट्स कहा जाता है।

एडवांस इन न्यूट्रिशन में प्रकाशित एक नए अध्ययन में वैज्ञानिकों ने लिखा है कि सांस के जरिए हमारे आहार में जिंक, मैंगनीज और आयोडीन जैसे जरूरी पोषक तत्वों को शामिल किया जा सकता है। हम प्रतिदिन लगभग 9,000 लीटर हवा अंदर लेते हैं। जीवन काल में 43.8 करोड़ लीटर हवा हमारे शरीर में पहुंचती है। खाने के विपरीत, सांस लेना कभी बंद नहीं होता। हवा के घटकों के संपर्क में आने की मात्रा समय के साथ बढ़ती जाती है, भले ही उनकी सांद्रता कम हो।

अभी तक वायु के स्वास्थ्य प्रभावों के बारे में अधिकांश शोध प्रदूषण पर केंद्रित रहे हैं। हमारे लिए क्या फायदेमंद हो सकता है, इस पर ध्यान देने के बजाय हमारा फोकस इस बात पर है कि क्या बुरा है। हवाई पोषक का विचार विज्ञान पर आधारित है। उदाहरण के लिए ऑक्सीजन तकनीकी रूप से एक पोषक तत्व है। सभी जानते है कि यह रासायनिक पदार्थ शरीर के बुनियादी कार्यों को बनाए रखने के लिए आवश्यक है।

हवाई पोषक तत्व मुख्य रूप से नाक, फेफड़े और गले के पीछे छोटी रक्त वाहिकाओं के नेटवर्क के माध्यम से अवशोषित होकर हमारे शरीर में प्रवेश करते हैं। फेफड़े आंत की तुलना में कहीं अधिक बड़े अणुओं को अवशोषित कर सकते हैं। ये अणु 260 गुना बड़े होते हैं। ये अणु रक्तप्रवाह और मस्तिष्क में अवशोषित होते हैं। सांस के जरिए ली जाने वाली दवाएं जैसे कोकेन,

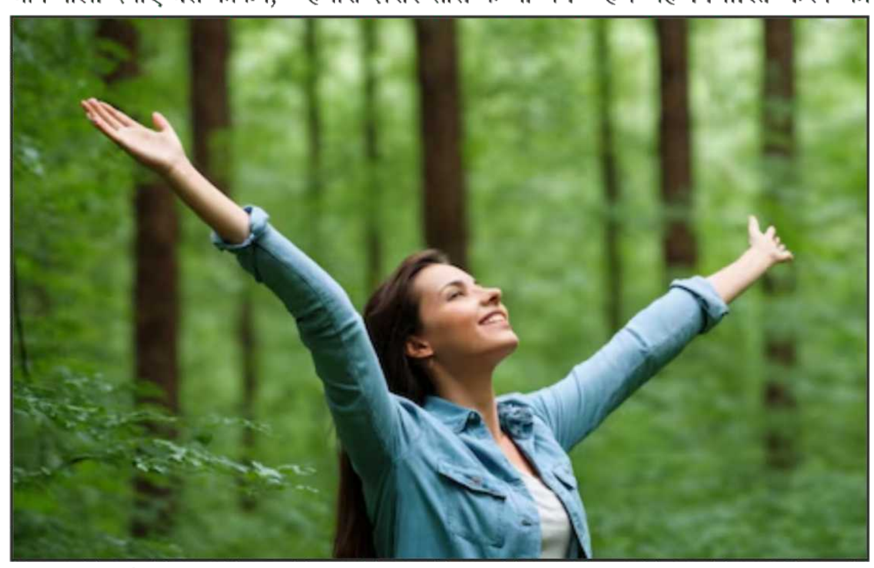

निकोटीन और एनेस्थेटिक दवाएं कुछ ही सेकंड में शरीर में प्रवेश कर जाती हैं। वे मुंह से ली जाने वाली दवाओं की तुलना में बहुत कम सांद्रता पर प्रभावी होती हैं। इसकी तुलना में आंत एंजाइम और एसिड के साथ पदार्थों को उनके सबसे छोटे भागों में विभक्त कर देती है। आंत स्टार्च, शर्करा और अमीनो एसिड को ग्रहण करने में बहुत अच्छी है, लेकिन यह कुछ खास प्रकार की दवाओं को लेने में इतनी अच्छी नहीं है। वास्तव में, वैज्ञानिक दवाओं को बेहतर बनाने की कोशिश कर रहे हैं ताकि हम उन्हें मुंह से प्रभावी ढंग से ले सकें।

सांस के जरिए महत्वपूर्ण तत्वों के शरीर में प्रवेश का विचार नया नहीं है। 1960 के दशक के शोध में पाया गया कि हवा में आयोडीन के संपर्क में आने वाले कपड़े धोने वाले कर्मचारियों के रक्त और मूत्र में आयोडीन का स्तर अधिक था। हाल ही में, आयरलैंड के शोधकर्ताओं ने समुद्री शैवाल से समृद्ध तटीय क्षेत्रों के पास रहने वाले स्कूली बच्चों का अध्ययन किया, जहां वायुमंडलीय आयोडीन गैस का स्तर बहुत अधिक था। इन बच्चों के मूत्र में काफी अधिक आयोडीन था और कम समुद्री शैवाल वाले तटीय क्षेत्रों या ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले बच्चों की तुलना में उनमें आयोडीन की कमी होने की संभावना कम थी। उनके आहार में आयोडीन में कोई अंतर नहीं था। इससे पता चलता है कि हवा में मौजूद आयोडीन विशेष रूप से बहुत अधिक समुद्री शैवाल वाले स्थानों में मौजूद आयोडीन आहार में इस तत्व के पूरक के रूप में काम आ सकती है। यह इसे एक एरोन्यूट्रिएंट बनाता है जिसे हमारा शरीर सांस के माध्यम से अवशोषित कर सकता है। गंध की इंद्रिय और श्वसन प्रणाली में सिलिया (बाल जैसी संरचना) में विशेष रिसेप्टर्स होते हैं जो संभावित एरोन्यूट्रिएंट्स की शृंखला से बंध सकते हैं। इनमें कोलीन, विटामिन सी, कैल्शियम, मैंगनीज, मैग्नीशियम, आयरन और यहां तक कि अमीनो एसिड जैसे पोषक तत्व शामिल हैं।

70 साल पहले प्रकाशित शोध से पता चला कि स्प्रे के रूप में विटामिन बी12 का प्रयोग इस विटामिन की कमी का इलाज कर सकता है। यह उन लोगों के लिए बहुत महत्वपूर्ण है जिनमें बी12 की कमी की दर अधिक है। इनमें शाकाहारी, वृद्ध लोग, डायबिटीज से पीड़ित लोग और अत्यधिक शराब का सेवन करने वाले लोग शामिल हैं। वैज्ञानिकों का कहना है कि मैंगनीज और जिंक नाक में गंध को महसूस करने वाली स्नायु कोशिकाओं के माध्यम से मस्तिष्क में प्रवेश कर सकते हैं। मैंगनीज एक आवश्यक पोषक तत्व है, लेकिन इसका बहुत अधिक सेवन मस्तिष्क को नुकसान पहुंचा सकता है। यह वेल्डर में देखा जाता है, जो हवा से उच्च स्तरों के संपर्क में आते हैं और उनमें मैंगनीज का जमाव हानिकारक स्तर पर होता है।

एयरोन्यूट्रिएंट्स के बारे में अभी भी बहुत सी अज्ञात बातें हैं। सबसे पहले, हमें यह पता लगाना होगा कि हरे भरे स्थानों, जंगलों, समुद्र और पहाड़ों जैसी प्राकृतिक सेटिंग्स में हवा के कौन से घटक स्वास्थ्य के लिए फायदेमंद हैं। आज तक, शोध मुख्य रूप से विषाक्त पदार्थों और पराग जैसे एलर्जी कारकों पर केंद्रित रहा है। हमें यह निर्धारित करने की आवश्यकता होगी कि हवा से कौन से घटक एरोन्यूट्रिएंट्स के रूप में वर्गीकृत किए जा सकते हैं। यह देखते हुए कि स्प्रे के रूप में विटामिन बी12 पहले प्रभावी साबित हुआ है, आगे की शोध से यह पता लगाया जा सकता है कि क्या विटामिन डी जैसे अन्य सूक्ष्म पोषक तत्वों को स्प्रे में बदल कर पोषक तत्वों की कमी को दूर किया जा सकता है।

दुख की बात यह है कि ताजी हवा के महत्व को समझते हुए भी हम हवा को प्रदूषित होने से नहीं रोक पा रहे हैं। उत्तरी भारत में हर साल सर्दियां आरम्भ होते ही हवा प्रदूषित होने लगती है और आकाश में सूक्ष्म पदार्थ अथवा पार्टिकुलेट मैटर की मात्रा बढ़ती जाती है। अधिकांश शहरों में एयर क्वालिटी इंडेक्स लगातार बढ़ता जाता है। कई लोगों को सांस संबंधी तकलीफ होने लगती है। हवा का भरपूर लाभ उठाने के लिए उसका स्वच्छ होना जरूरी है। मौसमी कारणों से होने वाले वायु प्रदूषण को रोकना बहुत मुश्किल है लेकिन हम इंसानी गतिविधियों पर अंकुश लगाकर हवा में प्रदूषित तत्वों की मौजूदगी को जरूर कुछ कम कर सकते हैं।

मुकुल व्यास

गेहूं की प्रमुख बीमारियां एवं रोकथाम

गेहूं भारत में मुख्य अनाज की फसल है। गेहूं की उत्पादकता में सबसे अधिक वृद्धि हरियाणा, पंजाब और उत्तर प्रदेश में देखी गई है। इस लेख के माध्यम से किसानों को गेहूं में होने वाली प्रमुख बीमारियां एवं उनकी रोकथाम के उपाय से अवगत करना है, ताकि किसान समय रहते अपनी फसल को नुकसान से बचा सकें।

केशव सहारण, डॉ. मनजीत सिंह एवं
डॉ. विनोद कुमार मलिक, पौध रोग विज्ञान विभाग,
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

पीला रतुआ

इस बीमारी का कारक जीव एक्सीनिया स्ट्रिफोर्मिस है।

लक्षण : * इस बीमारी से पत्तों पर पीले रंग के छोटे-छोटे धब्बे कतारों में बन जाते हैं।

* कभी-कभी यह धब्बे पत्तियों के डंठलों पर भी पाए जाते हैं।

* समय के साथ-साथ रोग

ग्रसित पत्तियां सूख जाती हैं।

* बाद के चरण में यह घाव काले रंग के हो जाते हैं।

रोकथाम :

* रोग रोधी किस्मों का चुनाव करें।

* पीले रतुए की रोकथाम के लिए बीमारी के लक्षण नज़र आते ही 200 मिलीलीटर प्रोपिकोनाज़ोल 20 ई.सी. (टिल्ट 25 प्रतिशत ई.सी.) नामक दवाई को 200 लीटर पानी में मिला कर प्रति एकड़ के हिसाब से छिड़काव करें।

* यदि मौसम बीमारी फैलने के अनुकूल है, तो इस छिड़काव को 10-15 दिन के अंतराल में दोहरा सकते हैं।

भूरा रतुआ

इस बीमारी का कारक जीव एक्सीनिया ट्रिटिसिना है।

लक्षण : * इस बीमारी के लक्षण पत्तियों पर नारंगी रंग के गोल-गोल धब्बे दिखाई देते हैं।

* कभी-कभी यह धब्बे पत्तियों के डंठलों पर भी पाए जाते हैं, जो बाद में काले रंग के हो जाते हैं।

रोकथाम : * रोग किस्मों रोधी किस्म का चुनाव करें।

* प्रति एकड़ 800 ग्राम डाइथेन ज़ैड-78 (ज़िनेब) या डाइथेन एम-45 (मैन्कोज़ेब) नामक दवाई को 250 लीटर पानी में मिला कर छिड़काव करें।

* पहला छिड़काव तब करें, जब कहीं-कहीं बीमारी नज़र आए। बाद में 10 से 15 दिन के अंतराल पर 2 या 3 छिड़काव कर सकते हैं।

काला रतुआ

इस बीमारी का कारक जीव एक्सीनिया ग्रामिनिस ट्रिटिकाई है।

लक्षण : * इस बीमारी के कारण रोग ग्रसित पौधों में लाल या भूरे से काले रंग के लम्बे धब्बे तनों व पत्तियों के डंठलों पर बन जाते हैं।

रोकथाम : * रोग किस्मों रोधी किस्म का चुनाव करें।

* प्रति एकड़ 800 ग्राम डाइथेन ज़ैड-78 (ज़िनेब) या डाइथेन एम-45 (मैकोज़ेब) नामक दवाई को 250 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

* पहला छिड़काव तब करें, जब कहीं-कहीं बीमारी नज़र आए। बाद में 10 से 15 दिन के अंतराल पर 2 या 3 छिड़काव कर सकते हैं।

करनाल बंट

इस बीमारी का कारक जीव

टिलेसिया इंडिका है।

लक्षण : * इस बीमारी के लक्षण बालियां निकलने के बाद दिखाई देते हैं।

* रोग ग्रसित दानों में काले रंग का पाऊडर बन जाता है तथा इनसे सड़ी मछली जैसी गंध आती है।

रोकथाम : * बीज उपचार के लिए 2 ग्राम थाइरम या 1 ग्राम टैब्युकोनाज़ोल नामक दवाई प्रति किलोग्राम बीज की दर से करें।

* रोगरोधी किस्में जैसे डब्ल्यू.एच.-283, डब्ल्यू.एच.-896 तथा राज-3765 की बुवाई करें।

खुली कांगियारी

इस बीमारी का कारक जीव यूस्टिलेगो ट्रिटिकाई है।

लक्षण : * रोग ग्रसित पौधों की बालियां काले पाउडर के रूप में दिखाई देने लगती हैं।

* रोगी पौधों में प्राय: बालियां निकलने से पूर्व सबसे ऊपरी पत्ती (फ्लैग लीफ) पीली पड़ जाती

हैं।

* यह रोग प्रदेश के सभी भागों में व लगभग सभी किस्मों में पाया जाता है।

रोकथाम :

*** धूप उपचार :** मई-जून के महीने में प्राय: 8 से 12 बजे तक बीज को पानी में 4 घंटे भिगोने के बाद उसे पतली परत के रूप में पक्के फर्श पर सुखा लें। सुखाए बीज को बोने के समय तक किसी सूखे स्थान पर रखें। धूप उपचार के बाद किसी दवा उपचार की आवश्यकता नहीं।

*** उन्नत सौर ताप उपचार :** यदि किसी कारणवश सौर ताप उपचार मई-जून माह में नहीं किया गया, तो सितम्बर माह में भी किसी शांत एवं धूप वाले दिन कर सकते हैं। इस उपचार में 40 किलोग्राम बीज को 40 लीटर पानी में भिगोया जाता है व इसके लिए गैल्वेनाइज्ड टब का प्रयोग किया जाता है।

* बीज उपचार 2-3 ग्राम बाविस्टिन या वीटावैक्स या 1 ग्राम टैबुकोनाज़ोल नामक दवाई प्रति किलोग्राम बीज की दर से करें।

* रोग ग्रसित पौधों की बालियां दिखाई देते ही तुरन्त प्रभाव से नष्ट करें।

शेष पृष्ठ 8 पर

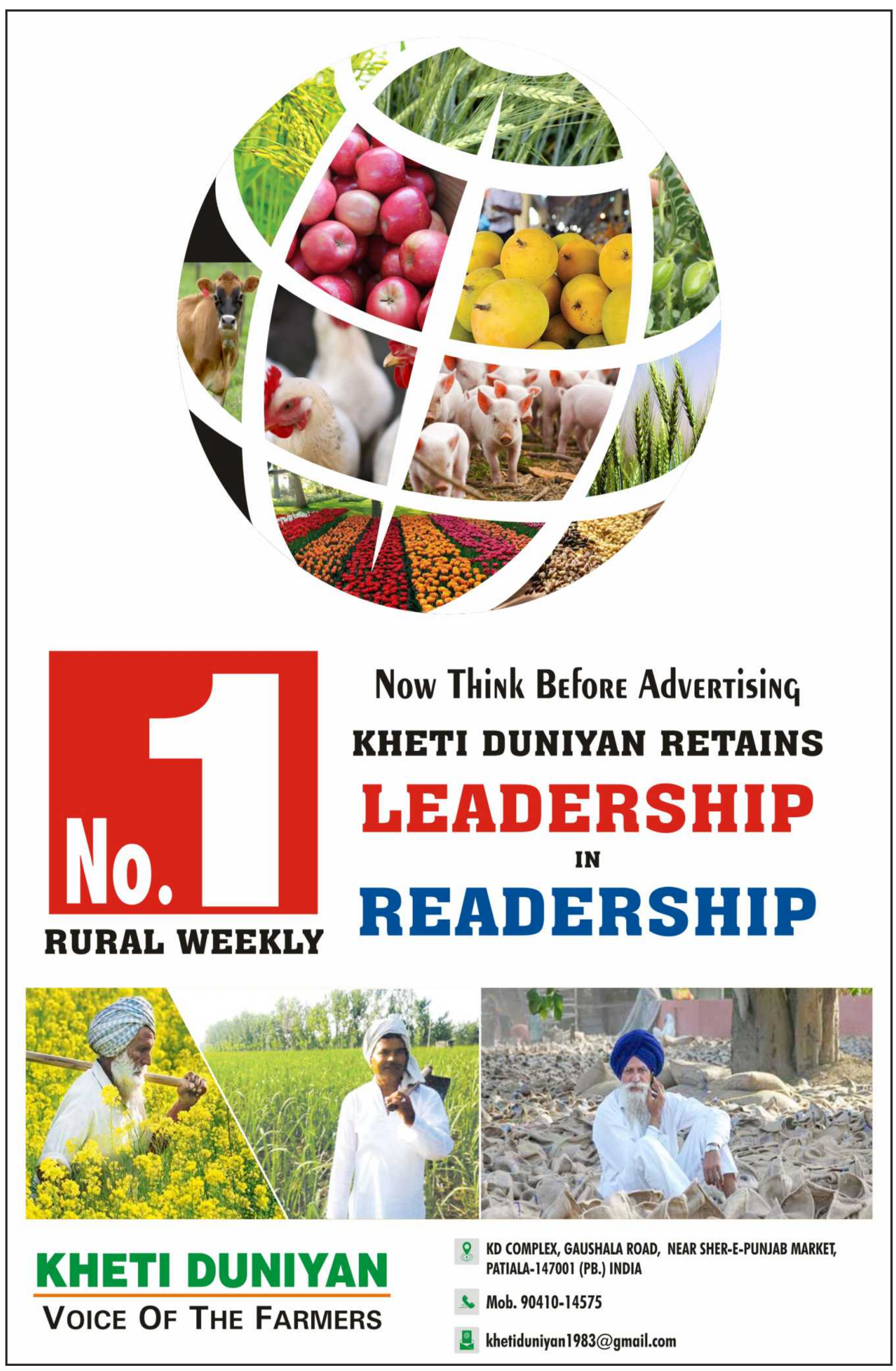

घर में सब्ज़ियों के पौधे लगाने के बाद उनकी देखभाल करना भी बहुत जरुरी है। मौसम के अनुसार खाद और पानी देने के साथ-साथ उन्हें रोगों से भी बचाना पड़ता है। जब सब्ज़ियों के पौधों को रोग होते हैं, तो ये उनकी उत्पादन क्षमता को बेहद प्रभावित करते हैं। सब्ज़ियों के पौधों में कवक, बैक्टीरिया और वायरस रोगों का कारण बनते हैं। ऐसे में अगर आपको लगता है कि आपके पौधों को कीड़े पकड़ रहे हैं, तो शुरूआत में ही इसका इलाज कर लें।

सब्ज़ियों में होने वाले मुख्य रोग

कालीसड़न : यह रोग क्रूसिफेरस कुल की सब्ज़ियों की सबसे गंभीर बीमारियों में से एक है। ये ब्रोकली, पत्तागोभी, फूलगोभी, केले और शलजम जैसी सब्ज़ियों में होता है। इस रोग के प्रारम्भिक लक्षण में शिराओं के काले पड़ने के साथ पीले रंग के 'वी' आकार के घाव देख सकते हैं।

तुषार रोग : यह रोग आलू और टमाटर का है। इसके कारण पौधे की पत्तियां मुरझा जाती हैं और किनारों से अंदर की ओर भूरे रंग की हो जाती हैं। पत्तियां सूख सकती हैं और मुड़ जाती हैं। गंभीर स्थिति में पौधों के तने भूरे रंग के हो जाते हैं और पौधे गिर कर मर जाते हैं।

कोमल फफूंदी : इसमें पत्ती की ऊपरी सतह पर अनियमित पीले रंग के धब्बे और नीचे की सतह पर भूरे रंग के धब्बे देखे जा सकते हैं। इसमें पत्ती के घावों की निचली सतह सफेद या भूरे रंग के माइसीलियम से ढकी हुई होती है। इसमें पत्तियां सूख भी जाती हैं।

पाउडर फफूंदी : ये रोग पत्तियों की सतहों पर एक सफेद पाउडर परत के रूप में फैल जाता है। इससे मटर, बीन, भिंडी, खीरा, खरबूज, कुकुरबिटा और कद्दू प्रभावित होते हैं। इस रोग से प्रभावित पौधों पर गहरे भूरे या चमकीले पीले रंग के धब्बे भी दिखाई दे सकते हैं।

सब्ज़ियों को रोगों से बचाएं :

* बगिया की साफ- सफाई का विशेष ध्यान रखें। अवांछनीय और संक्रमित पौधों की पत्तियों व तनों को हटा दें।

* सर्दियों में पांच-सात दिनों के अंतराल में पौधों को पानी दें। अतिरिक्त जल बगिया से बाहर न निकलने दें।

* रोगों से बचने के लिए 25 मिलीलीटर एक सप्ताह पुरानी छाछ और 1 लीटर पानी मिला कर छिड़काव करें।

* नीम की खली और केंचुआ खाद का प्रयोग करें।

* निंबोली सत दवाई के 5.0 प्रतिशत घोल का छिड़काव 15 दिनों के अंतराल पर करें।

* नीम के तेल की 5.0 मिलीलीटर मात्रा प्रति लीटर पानी में घोल कर 7 दिनों के अंतराल में छिड़काव करने से काली सड़न व बैक्टीरियल विल्ट को रोका जा सकता है।

* सब्ज़ियों में रोग के लक्षण दिखाई देते ही कवकनाशी दवा मैन्कोजेब का 0.3 प्रतिशत, कार्बनडाज़िम का 0.1 प्रतिशत और सल्फर का 0.3 प्रतिशत छिड़काव करें।

डॉ. आशीष श्रीवास्तव

इन दिनों के कृषि कार्य

प्याज की रोपाई: रोपाई से पूर्व खेत को उचित आकार की क्यारियों में बांट देना चाहिए। दीमक व अन्य भूमिगत कीटों की रोकथाम के लिए रोपाई से पूर्व अंतिम जुताई के समय क्लोरपायरीफोस 20 ई.सी. की 4-5 लीटर मात्रा को प्रति हैक्टेयर की दर से खेप में समान रूप से बिखेरकर अच्छी तरह से मिट्टी में मिला देना चाहिए। तैयार खेत में 15 सैंटीमीटर लंबे स्वस्थ पौधों को 15-20 सैंटीमीटर की दूरी पर पंक्तियों में रोपना चाहिए। पौधे से पौधों की दूरी 7-10 सैंटीमीटर रखनी चाहिए। प्याज की पौध उखाडने के 4-5 दिन पूर्व नर्सरी की सिंचाई अवश्य करें। ताकि नवजात पौधे उखाडते समय उनकी जड़ों को क्षति न पहुंचे। पौध को उखाडने के बाद रोपाई के पूर्व 1 ग्राम/ लीटर पानी में बाविस्टीन का घोल बनाकर उसमें जड़ों वाले हिस्से डुबो दें। इस घोल में जड़ों को 5 मिनट डुबाने के बाद 10 मिलीलीटर नुवान और 1 ग्राम स्ट्रैप्टोसाइक्लीन प्रति 10 लीटर पानी के घोल से उपचारित करें। रोपाई का कार्य शाम के समय करें ताकि रातभर में पौधों की जड़ें मिट्टी में स्थापित होकर दिन की धूप सहन कर सके। रोपाई के समय जड़ों को मुड़ने न दें। साथ ही पौधें के आसपास मिट्टी अच्छी प्रकार से दबा दें ताकि पौधों को स्थापित होने में मदद मिले। रोपाई के बाद सिंचाई अवश्य करें। रोपाई के 8-10 दिन बाद कमजोर, मुरझाए और मरे हुए पौधों के स्थान पर नये पौधे लगा दें।

सब्जियां :

• तापमान में कमी को देखते हुए सब्जियों में सिंचाई शाम के समय करें, यह फसलों को संभावित पाले व शीत लहर से बचाने में सहायक होती है।

• इस मौसम में किसान भाई सब्जियों की निराई-गुड़ाई करके खरपतवारों को नष्ट करें, सब्जियों की फसल में सिंचाई करें तथा उसके बाद संस्तुत उर्वरकों का प्रयोग करें।

• खेत में तैयार मूली, गाजर और शलगम को उखाड़कर बिक्री हेतु बाजार भेजें।

• लहसुन में पहले हल्की सिंचाई और फिर ओट आने पर गुड़ाई करें।

• मिर्च और बैंगन की तैयार फसल से हरी मिर्चियों को तोड़कर बिक्री हेतु बाजार भेजें।

• अक्तूबर में बोई गई पालक की फसल कटाई हेतु तैयार हो गई होगी। इसको काटकर बिक्री हेतु बाजार भेजें।

• मटर की फसल पर 2 प्रतिशत यूरिया के घोल का छिड़काव करें। इससे मटर की फलियों की संख्या में वृद्धि होती है।

• कद्दूवर्गीय सब्जियों के अगेती फसल के पौध तैयार करने के लिए बीजों को छोटी पालीथीन के थैलों में भर कर पाली घरों में रखें।

• राजमा, सेम, टमाटर, मिर्च, शिमला मिर्च, गेंदे, मटर व रबी फसलों में शाम के समय आवश्यकतानुसार एक हल्की सिंचाई करें।

• इस मौसम में तैयार खेतों में प्याज की रोपाई करें तथा छेदक कीटों की संख्या अधिक पाये जाने पर इनका नियंत्रण फोलिडाल पाउडर/2 5 किलोग्राम हैक्टेयर का प्रयोग आसमान साफ होने पर करें।

• यदि टमाटर, फूलगोभी, बन्दगोभी और ब्रोकली की पौधशाला तैयार है तो मौसम को ध्यान में रखते हुए इस माह भी इनकी रोपाई कर सकते हैं।

• गोभीवर्गीय सब्जियों में पत्ती खाने वाले कीटों की निरंतर निगरानी करते रहें, यदि इनकी संख्या अधिक हो तो बी.टी./1.0 ग्राम/लीटर पानी या स्पेनोसेड दवा/1 एम.एल./3 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव आसामन साफ होने पर करें।

• मटर में फली छेदक तथा टमाटर में फल छेदक की निगरानी हेतु फीरोमोन प्रपंच/8-10 प्रपंच/ हैक्टेयर खेती में लगाएं।

• प्याज की समय से बोई गई फसल में थ्रिप्स के आक्रमण की निरंतर निगरानी करते रहें। कीट के पाये जाने पर कार्बारिल/ 2 ग्राम लीटर पानी किसी चिपकने वाले पदार्थ जैसे टीपोल आदि (1.0 ग्राम प्रति एक लीटर घोल में मिलाकर छिड़क दें।

• प्याज में परपल ब्लोस रोग की निगरानी करते रहें। रोग के लक्षण पाये जाने पर इन्डोथेन एम 45/3 ग्राम लीटर पानी किसी चिपकने वाले पदार्थ जैसे टीपोल आदि (1 ग्राम प्रति एक लीटर घोल) में मिलाकर छिड़काव करें।

• पालक, धनिया, मेथी की बुवाई कर सकते है। पत्तों की अच्छी बढ़वार के लिए 50 किलोग्राम यूरिया/ हैक्टेयर की दर से छिड़क दें।

• टमाटर में झुलसा रोग की निरंतर निगरानी करते रहें। लक्षण दिखाई देने पर बाविस्टीन/10 ग्राम लीटर पानी या इन्डोथेन एम 45/ 2.0 ग्राम/लीटर पानी में मिलाकर छिड़क दें।

उद्यान : • आंवले के तैयार फलों को तोड़कर बाजार में बिक्री हेतु भेजें। मूलवृंत हेतु बीज का प्रबंध करें।

• मौसमी, माल्टा, नींबू और किन्नों आदि के तैयार फलों को सही अवस्था पर तोड़कर बाजार में बिक्री हेतु भेजें।

• लोकाट एवं कटहल के पेड़ों के थाले बनाकर उनमें सिंचाई अवश्य करें।

• आम या अन्य फलों के बागों में खाद व उर्वरकों का प्रयोग करने का यह सही समय है। आम के पौधों में गोबर की खाद 1.5, 3.0, 4.5, 6.0, 7.5 किलोग्राम पौधा उम्र के हिसाब से क्रमश: प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ एवं पंचम वर्ष व अधिक उम्र के हिसाब से दें। साथ ही उर्वरकों की संस्तुत मात्रा का भी प्रयोग इसी समय करें।

• इस माह मिली बग के युवा जमीन से निकलकर आम के तनों पर चढ़ेंगे, इनको रोकने हेतु जमीन से 0.5 मीटर की ऊंचाई पर आम के तने के चारों तरफ 25 से 30 सैंटीमीटर चौड़ी पॉलिथीन की पट्टी लपेटें। तने के आसपास की मिट्टी की खुदाई करें जिससे उनके अंडे नष्ट हो जाएंगे।

• अमरूद में सिंचाई करें। तैयार फलों को सही अवस्था पर तोड़कर बाजार में बिक्री हेतु भेजें। अमरूद में वनस्पतिक प्रवर्धन हेतु ग्राफ्टिंग आदि का कार्य सम्पन्न करें।

• पोपलर की नर्सरी की सिंचाई करें।

• क्यारियों अथवा गमलों में लगे हुए एक वर्षीय पुष्पों मं आवश्यकतानुसार निकाई एवं सिंचाई करें।

• राजनीगंधा फसल में निकाई-गुड़ाई करें।

• कलकतिया गुलाव की जमीन से 30 सैंटीमीटर ऊपर से कटाई-छंटाई अवश्य सम्पन्न करें।

• गेंदे की फसल मे पुष्प सड़न रोग के आक्रमण की निगरानी करते रहें। यदि लक्षण दिखाई दें तो बाविस्टिन/1 ग्राम/ लीटर पानी अथवा इन्डोफिल एम 45/2 एम.एल/लीटर पान में मिलाकर आसमान साफ होने पर छिड़क दें।

• गेंदे के तैयार फूलों का तोड़कर बिक्री हेतु बाजार भेजें।

फसलों की अच्छी और अधिक पैदावार के लिए

केंचुआ खाद या वर्मी कम्पोस्ट - कैसे काम में लाएं

डॉ. रघुबीर सिंह कालीरामणां, खण्ड कृषि अधिकारी, बरवाला (हिसार), कृषि एवं किसान कल्याण विभाग, पंचकूला

गतांक से आगे

11. सर्दियों में तापक्रम को उचित बनाए रखने के लिए 8 से 10 दिनों में एक बार ताज़े गोबर की 2 से 3 सैंटीमीटर परत कम्पोस्टिंग सामग्री पर लगाने चाहिए, ताज़े गोबर के प्रयोग से तापमान ऊंचा बना रहता है।

12. बरसात के दिनों में कम्पोस्ट को ऊंचे स्थान पर बनाना चाहिए और कम्पोस्ट बनाने के स्थान पर जल निकासी का उचित प्रबंध होना चाहिए। पानी भरने से केंचुए दूर चले जाते हैं, जिससे कम्पोस्ट बनाने में बाधा आती है। इसलिए कम्पोस्ट के स्थान पर पानी की निकासी एकदम कर देनी चाहिए।

13. वर्मी कम्पोस्ट बनाने के लिए उचित तापमान 25 से 35 डिग्री होना चाहिए।

कम्पोस्ट खाद से होने वाले फायदे :

1. मिट्टी के हिसाब से : केंचुए से भूमि की गुणवत्ता में सुधार आता है। भूमि की जल धारण क्षमता बढ़ती है। भूमि का उपयुक्त तापक्रम बनाए रखने में सहायक है। भूमि से पानी का वाष्पीकरण कम होगा। अत: सिंचाई जल की बचत होगी। केंचुए नीचे की मिट्टी ऊपर लाकर उसे उत्तम प्रकार की बनाते हैं। केंचुआ खाद में ह्यूमस भरपूर मात्रा में होने से नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाश एवं अन्य सूक्ष्म द्रव्य पौधों को भरपूर मात्रा में जल्दी उपलब्ध होते हैं। भूमि में उपयोगी जीवाणुओं की संख्या में वृद्धि होती है।

2. किसानों के हिसाब से : सिंचाई के अंतराल में वृद्धि होती है। रासायनिक खाद पर निर्भरता कम होने के साथ काश्त-लागत में कमी आती है।

3. पर्यावरण के हिसाब से : भूमि के जल स्तर में वृद्धि होती है। मिट्टी खाद्य पदार्थ और ज़मीन में पानी के माध्यम से होने वाले प्रदूषण में कमी आती है। कचरे का उपयोग खाद बनाने में होने से बीमारियों में कमी होती है।

4. अन्य उपयोग के हिसाब से :

(1) केंचुए से प्राप्त कीमती अमीनो एसिड्स एवं एनजाइम से दवाएं तैयार की जाती है।

(2) पक्षी, पालतू जानवर, मुर्गियां तथा मछलियों के लिए केंचुए का उपयोग खाद्य सामग्री के रूप में किया जाता है।

(3) आयुर्वेदिक औषधियां तैयार करने में इसका उपयोग होता है।

(4) पाऊडर, लिपिस्टिक, मलहम कई तरह के कीमती प्रसाधन तैयार करने हेतु केंचुए का उपयोग होता है।

(5) केंचुए के सूखे पाऊडर में 60 से 65 प्रतिशत प्रोटीन होता है।

कम्पोस्ट खाद / वर्मी कम्पोस्ट का मुख्य काम :

* यह भूमि की उर्वरकता, वातायनता को तो बढ़ाती है, साथ ही भूमि की जल सोखने की क्षमता में भी वृद्धि करता है।

* वर्मी कम्पोस्ट वाली भूमि में खरपतवार कम उगते हैं तथा पौधों में रोग भी कम लगते हैं। पौधों तथा भूमि के बीच पोषक तत्वों के आदान-प्रदान में बढ़ोत्तरी होती है।

* वर्मी कम्पोस्ट का उपयोग करने वाले खेतों में अलग-अलग फसलों के उत्पादन में 25-30 प्रशितात तक की वृद्धि हो सकती है।

* मिट्टी में पोषक तत्वों की मात्रा बढ़ जाती है। वर्मी कम्पोस्ट युक्त मिट्टी में नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाश का अनुपात 5:8:11 होता है। अत: फसलों को पर्याप्त पोषक तत्व सरलता से उपलब्ध हो जाते हैं।

* केंचुओं के मल में पेरीट्रॉपिक झिल्ली होती है, जो ज़मीन से धूल कणों को चिपका कर ज़मीन का वाष्पीकरण होने से रोकती है।

* केंचुओं के शरीर का 85 प्रतिशत भाग पानी से बना होता है, इसलिए सूखे की स्थिति में भी ये अपने शरीर के पानी के कम होने के बावजूद जीवित रह सकते हैं तथा मरने के बाद भूमि को नाइट्रोजन प्रदान करते हैं।

* वर्मी कम्पोस्ट मिट्टी में कार्बनिक पदार्थों की वृद्धि करता है तथा भूमि में जैविक क्रियाओं को निरंतरता प्रदान करता है। इसका प्रयोग करने से भूमि उपजाऊ एवं भुरभुरी बनती है।

* यह खेत में दीमक एवं अन्य हानिकारक कीटों को नष्ट कर देता है। इससे कीटनाशक की लागत में कमी आती है।

इसके उपयोग के बाद 2-3 फसलों तक पोषक तत्वों की उपलब्धता बनी रहती है।

* मिट्टी में केंचुओं की सक्रियता के कारण पौधों की जड़ों के लिए उचित वातावरण बना रहता है, जिससे पौधों का सही विकास होता है।

* यह कचरा, गोबर तथा फसल अवशेषों से तैयार किया जाता है, जिससे पर्यावरण प्रदूषित नहीं होता है।

* इसके प्रयोग से सिंचाई की लागत में कमी आती है। लगातार रासायनिक खादों के प्रयोग से कम होती जार ही मिट्टी की उर्वरकता को इसके उपयोग से बढ़ाया जा सकता है।

* इसके प्रयोग से फल, सब्ज़ी, आनाज की गुणवत्ता में सुधार आता है, जिससे किसानों को उपज का बेहतर मूल्य मिलता है।

* केंचुए में पाए जाने वाले सूक्ष्म जीव मिट्टी का पी.एच. संतुलित करते हैं।

* उपभोक्ताओं को पौष्टिक भोजन की प्राप्ति होती है।

* ग्रामीण क्षेत्रों में इसके उपयोग से रोज़गार की सीााावनाएं उपलब्ध हो जाती हैं।

* यह बहुत कम समय में तैयार हो जाता है। केंचुए नीचे की मिट्टी को ऊपर लाकर उसे उत्तम प्रकार की बनाते हैं। ज़मीन में केंचुआ खाद का उपयोग करने के बाद रासायनिक खाद व कीटनाशक दवा का उपयोग करें।

गंधक का दलहनी-तिलहनी व अनाज फसलों में महत्व

पौधों के सुचारू रूप से बढ़ते स्वस्थ रहने, फूलने और फलने के लिए अनेकों पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है। इसमें से कार्बन, हाइड्रोजन, ऑक्सीजन व क्लोरीन पौधों को जल एवं वायु से प्राप्त हो जाता है।

डॉ. ए. के. सिंह, कृषि विज्ञान केन्द्र, ज.ने.कृ.वि.वि., जबलपुर (मध्य प्रदेश)

नाईट्रोजन, फास्फोरस, पोटाश, गंधक, कैल्शियम, मैग्नीशियम, जस्ता, तांबा, लोहा, मैगनीज़, बोरॉन, मोलिब्डेनम एवं निकिल को पौधे मृदा से अवशोषित करते हैं, जिसमें नाईट्रोजन, फास्फोरस एवं पोटाश मुख्य, गंधक, कैल्शियम, मैग्नीशियम गौण एवं जस्ता, तांबा, लोहा, मैगनीज़, बोरॉन, मोलिब्डेनम एवं निकिल सूक्ष्म

पोषक तत्वों की श्रेणी में आते है। प्रायः फसल उत्पादन में केवल नाईट्रोजन, फास्फोरस एवं पोटाश का प्रयोग मृदा में किया जाता है। बाकी तत्वों के बारे में कृषकों में जानकारी का अभाव है। लेकिन उन तत्वों की कमी के होने से पौधों में अनेकों प्रकार की विकृतियां दृष्टिगोचर होती हैं, जिसको लोग बीमारियों की संज्ञा देते हैं पर सही बात तो ये है कि ये बीमारियां नहीं पोषक तत्वों की कमी है, जो विभिन्न फसलों में अलग-अलग लक्षण के रूप में पौधों में प्रकट होती हैं।

गंधक की कमी के लक्षण : भूमि में गंधक की कमी होने के साथ ही पौधों पर लक्षण दृष्टिगोचर होने लगते है। ये लक्षण सभी फसलों में अलग-अलग होते हैं। गंधक की कमी के लक्षण सर्वप्रथम नवीन पत्तियों पर दिखाई देते हैं। ये पत्तियां पीली पड़ जाती हैं और पौधों की बढ़वार कम हो जाती है। तना कड़ा, खुश्क पतला और बौना दिखाई देता है। गंधक की कमी के लक्षण नाइट्रोजन की कमी के लक्षणों से काफी मिलते-जुलते हैं, अंतर यह है कि नाइट्रोजन के अभाव में पुरानी पत्तियां पहले पीली पड़ती हैं और नई पत्तियां हरी बनी रहती हैं जबकि गंधक की कमी से नई पत्तियां पीली पड़ती हैं, पुरानी पत्तियां हरी बनी रहती हैं। अधिक कमी के अभाव में पूरा पौधा पीला पड़ जाता है। खाद्यान्न फसलों में इसकी कमी से परिपक्वता की अवधि बढ़ जाती है। पौधों की पत्तियां का रंग हरा रहते हुए भी बीच का भाग पीला हो जाता है। तिलहनी और दलहनी फसलों में गंधक की कमी के लक्षण अधिक उभरते है। सरसों वर्गीय फसलों में गंधक की कमी के कारण फसल की प्रारंभिक अवस्था में पत्ती का निचला भाग बैंगनी रंग का हो जाता है। दलहनी फसलों में नाईट्रोजन स्थिर करने वाली ग्रंथियां कम बनती हैं। गंधक की कमी होने पर फल ठीक से नहीं पकते हैं और हल्के हरापन लिए रहते है। फल पकने के पूर्व ही गिर जाते हैं।

विभिन्न फसलों में गंधक की आवश्यकता : विभिन्न फसलों द्वारा अवशोषित गंधक की मात्रा 5 किलोग्राम से 50 किलोग्राम गंधक प्रति हैक्टेयर तक होती है, जो फसलों के प्रकार व मृदा में प्राप्य गंधक की मात्रा व अन्य तत्वों की उपलब्धता, वृद्धि दशा, फसल संघनता व उपज पर निर्भर करती है। सामान्य रूप से गंधक अवशोषण का क्रम तिलहनी फसलों में अधिक तत्पश्चात् दलहनी तथा इसके बाद आनाज फसलों में होता है। एक टन आनाज, दलहनी व तिलहनी फसल द्वारा मृदा से गंधक का अवशोषण क्रमशः 4, 8 व 12 किलोग्राम होता है। गंधक के प्रति सबसे अधिक फसल प्रतिक्रिया

तिलहनी फसलों में देखी गई है, जोकि अन्य फसलों की अपेक्षा अधिक होती है।

आवश्यकता की दृष्टि से गंधक और फास्फोरस की मात्रा दलहनी और तिलहनी फसलों में धान्य फसलों की अपेक्षा अधिक आंकी गई है। धान्य फसलों में गंधक और फास्फोरस का अनुपात 1:3 का होता है, जबकि यही अनुपात दलहनी फसलों में 1:0.8 और तिलहनी फसलों में 1:0.6 का पाया गया है। इससे स्पष्ट हो जाता है कि तिलहनी फसलें गंधक का अवशोषण फास्फोरस की तुलना में लगभग दोगुनी मात्रा में करती है।

पौधों में गंधक के कार्य :

* गंधक कार्बनिक पदार्थों की संरचना का एक अभिन्न अंग है। यह पौधों के क्लोरोफिल के निर्माण में सहायक होता है, जोकि पौधों के लिए अत्यंत आवश्यक है और यह पौधों की वानस्पतिक और जड़ों की वृद्धि में मदद करता है।

* यह सल्फर युक्त अमिनो अम्ल जैसे सिस्टाइन सिग्टीन, मिथियोनीन और प्रोटीन के संश्लेषण में सहायक होता है।

* सल्फर युक्त विटामिन्स और एन्जाइम बनाने में सहायक है और एन्जाइम की क्रियाशीलता को उत्प्रेरित करता है।

* यह फलदार पौधों में ग्रंथियों के बनाने में सहायता करता है, जिससे दलहनी फसलों में वायुमंडलीय नाइट्रोजन की यौगिकीकरण करने की क्षमता बढ़ती है। यह बीज बनाने को भी प्रोत्साहित करता है।

* गंधक विभिन्न फसलों की उपज और गुणवत्ता बढ़ाने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। तिलहनी फसलों में उपज के साथ-साथ तेल की मात्रा में बढ़ोत्तरी लाता है। दलहनी फसलों में प्रोटीन की मात्रा में वृद्धि करता है। गन्ने के रस के गुणों में सुधार करता है। ज्वार की चरी में उत्पन्न होने वाले विषैले पदार्थ हाइड्रोसायनिक अम्ल की मात्रा में कमी लाता है।

* लहसुन, प्याज़ और सरसों वर्गीय पौधों में जो गन्ध आती है, वह गंधक से बने पदार्थ ग्लूकोसाईड के कारण होती है।

गंधक युक्त उर्वरकों का चयन व प्रयोग : गंधक के विभिन्न स्त्रोतों में सिंगल सुपर फास्फेट, जिप्सम, फास्फो-जिप्सम, पायराइट, अमोनियम सल्फेट, बेन्टोनाइट-सल्फर, पिस्टीलेट गंधक पोषण हेतु अधिक उपयोगी पाए गए हैं। जिन मिट्टियों में जस्ता और गंधक दोनों की कमी हो, उनमें जिंक सल्फेट का प्रयोग अच्छा रहता है। क्षारीय और उदासीन मृदाओं के लिए सिंगल सुपर फास्फेट तथा जिप्सम आदि सर्वश्रेष्ठ गंधक युक्त उर्वरक हैं, जबकि अम्लीय मृदाओं के लिए अमोनियम सल्फेट, पोटाशियम सल्फेट और मैग्नीशियम सल्फेट अच्छे साबित हुए हैं। सामान्य रूप से फसलों में गंधक का प्रयोग आधार उपयोग के रूप में उत्तम पाया गया है, परन्तु तिलहनी फसलों में इसका प्रयोग बुवाई के 25-30 दिन बाद या निराई-गुड़ाई के समय किया जा सकता है। मृदा में पर्याप्त नमी होने की दशा में सतह पर पायराइट का भुरकाव किया जा सकता है। समान रूप से 8-10 टन प्रति हैक्टेयर की दर से कार्बनिक खादों का प्रयोग भी गंधक की कमी दूर करने में सार्थक सिद्ध हुआ है। दलहनी फसलों जैसे चना, मटर, अरहर इत्यादि में 40 किलोग्राम गंधक प्रति हैक्टेयर की दर से, जबकि मसूर, मूंग, उड़द तथा क्लस्टर बीन जैसे फसलों में 20 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर की दर से प्रयोग करने पर अधिकतम उपज प्राप्त की जा सकती है। प्रयोगों में यह पाया गया कि फसलों में सल्फेट युक्त जल से सिंचाई करने पर दिए जाने वाले गंधक युक्त उर्वरकों का कोई प्रभाव नहीं देखा गया।

गंधक की कमी का निदान : गंधक के उपयोग का समय इसके स्त्रोत पर निर्भर करता है। गंधक युक्त उर्वरकों को महीन पाउडर के रूप में खेत में फसल बोने के 20-25 दिन पहले मिलाना चाहिए, नहीं तो उससे उचित लाभ नहीं मिल पाता है, क्योंकि सल्फर उपलब्ध रूप में बदलने में समय लगता है। मूंगफली में फली बनते समय गंधक की पर्याप्त आपूर्ति के लिए दो भागों में (बुवाई व फली बनते समय) डालने की सलाह दी जाती है।

सारणी : गंधक की पूर्ति वाले उर्वरक

उर्वरक	गंधक की मात्रा (प्रतिशत में)	मृदा में प्रयोग की दर
जिप्सम	13	50-60 किलो/हैक्टेयर
सिंगल सुपर फास्फेट	12	फसलों की मांग के अनुसार
पोटाशियम सल्फेट	18	फसलों की मांग के अनुसार
पायराइट	22	25-30 किलो/हैक्टेयर
अमोनियम सल्फेट	24	25-30 किलो/हैक्टेयर
जिंक सल्फेट	11	25-30 किलो/हैक्टेयर
फास्फोजिप्सम	16	25-30 किलो/हैक्टेयर
बेंटोनाइट सल्फर	90	18-20 किलो/हैक्टेयर

शेष पृष्ठ 5 की

गेहूं की प्रमुख बीमारियां....

पत्तियों की कांगियारी

इस बीमारी का कारक जीव यूरोसिस्टिस एग्रोपाईरी है।

लक्षण : * इस बीमारी के कारण रोग ग्रसित पौधों के पत्तों पर नसों के साथ-साथ लंबी काली धारियां बन जाती है, जो बाद में फट कर काला चूर्ण जैसा दिखाई देता है।

रोकथाम : * बीज का उपचार 2-3 ग्राम बाविस्टिन या वीटावैक्स या 1 ग्राम टैब्युकोनाजोल नामक दवाई प्रति किलोग्राम बीज की दर से करें।

* रोग ग्रसित पौधों को उखाड़ कर सूखने के बाद नष्ट कर दें।

* रोग ग्रसित खेतों में रोगग्राही किस्म की बुवाई करने से बचें।

* रोगरोधी किस्में जैसे डब्ल्यू.एच.-896 व डब्ल्यू.एच.-283 की बुवाई करें।

चूर्णी रोग

इस बीमारी का कारक जीव ईरिसीफे ग्रामिनिस ट्रिटिकाई है।

लवण : * इस बीमारी के कारण रोग ग्रसित पत्तियों पर सफेद रंग का चूर्ण सा दिखाई देने लगता है।

* अधिक प्रकोप होने पर बालियां भी रोग ग्रसित हो जाती है।

* यह बीमारी सिंचित व नमी क्षेत्रों में अधिक होती है।

रोकथाम : * यह बीमारी खेत में दिखाई देते ही 800 से 1000 ग्राम घुलनशील गंधक को 200 लीटर पानी में मिला कर प्रति एकड़ की दर से छिड़काव करें।

* रोगरोधी किस्में जैसे डब्ल्यू.एच.-283, डब्ल्यू.एच.-896 व डब्ल्यू.एच.-542 की बुवाई करें।

चने के प्रमुख रोग एवं उनका निदान

बरखा रानी, कल्पना यादव एवं रमेश कुमार सांप
(कृषि अनुसंधान अधिकारी, जोधपुर), राजस्थान कृषि महाविद्यालय, उदयपुर (राज.)

चने की खेती सिंचित एवं असिंचित दोनों परिस्थितियों में की जाती है। पिछले दो दशकों में सिंचाई की अतिरिक्त सुविधाओं के कारण धान और गेहूं की फसलों ने चने की कृषि योग्य क्षेत्रों को प्रतिस्थापित किया है। धान और गेहूं फसल चक्र के कारण इन खेतों की उर्वरकता में कमी आई है, साथ ही साथ जहां पर धान की खेती के बाद चने की फसल बोने पर चने की बुवाई देर से होती है, जिससे कि तना छेदक कीटों तथा शुष्क मूल विगलन इत्यादि का प्रकोप अधिक होता है। चना की गुणवत्ता रोग व्याधियों के प्रकोप से बहुत प्रभावित होती है। यह प्रोटीन का एक बहुत अच्छा स्रोत होने के कारण चना की खेती रोग एवं व्याधियों के प्रति बहुत संवेदनशील होती है। आमतौर पर उत्तरी, उत्तर–पूर्व और पूर्वी भाग में पत्ती वाले रोग का प्रकोप रहता है। जबकि मध्य और मैदानी भागों में जल वाले रोग चना की फसल को ज्यादा हानि पहुंचाते हैं। इसलिए समेकित नाशीजीव प्रबंधन के द्वारा पौध संरक्षण के उपायों को अपना कर मिट्टी की उत्पादकता बढ़ाने या बनाये रखने के साथ–साथ कीटों एवं रोगों के संक्रमण से बचाया जा सकता है, ताकि फसलों का कम से कम आर्थिक क्षति हो।

1. चने में फली छेदक:

चने में फली छेदक का प्रबंधन: फली छेदक चने की एक कुख्यात कीट है, जो फसल को भारी नुकसान पहुंचाता है। फली छेदक के कारण पैदावार का नुकसान 21 प्रतिशत तक है। कीट के बारे में बताया जाता है कि चने को लगभग 50 से 60 प्रतिशत नुकसान होता है। चने के अलावा

कीट अरहर, मटर, सूरजमुखी, कपास, कुसुम, मिर्च, ज्वार, मूंगफली, टमाटर और अन्य कृषि और बागवानी फसलों पर भी हमला करता है। यह दालों और तिलहनों का एक विनाशकारी कीट है।

संक्रमण: कीट की शुरूआत आमतौर पर अंकुरण के एक पखवाड़े के बाद होती है और यह कली निकलने के शुरूआत के साथ बादल और उमस वाले मौसम में गंभीर हो जाती है। मादा अकेले कई छोटे सफेद अंडे देती है। 3-4 दिनों में अंडे से इल्लियां निकलती है, कोमला पत्तियों पर थोड़े समय के लिए खाती है और बाद में फली पर आक्रमण करते है। एक पूर्ण विकसित इल्ली लगभग 34 मिलीमीटर लंबी, हरी से भूरे रंग की हो जाती है। मिट्टी में चली जाती है, मिट्टी में यह प्यूपा बन जाती है। जीवन चक्र लगभग 30-45 दिनों में पूरा हो गया है। कीट एक साल में आठ पीढ़ियों को पूरा करता है।

प्रबंधन: गर्मियों में गहरी जुताई करें, जिससे ज़मीन में छिपे कीड़े को प्राकृतिक शिकारी खा सकें। 0.5 प्रतिशत जिगरी और 0.1 प्रतिशत बोरिक एसिड के साथ HaNVP 100 LE प्रति एकड़ की दर से अंडा सेने की अवस्था पर छिड़काव करें और 15-20 दिनों में दोहराएं। रसायनों के उपयोग में 2.00 मिलीलीटर प्रोफेनोफोस 50 ईसी प्रति लीटर पानी अंडानाशक के रूप में लेना चाहिए। फेरोमोन ट्रेप का उपयोग करें। 4-5 ट्रेप प्रति हैक्टेयर। शुरूआती अवस्था में नीम सीड करनल सत 5 प्रतिशत का स्प्रे करें। यदि संक्रमण अधिक हो, तो इंडोक्साकार्ब 14.5 प्रतिशत एस.सी. 0.5 मिलीलीटर या स्पिनोसेड 45 प्रतिशत एस.सी.0. 1 मिलीलीटर या 2.5 मिलीलीटर क्लोरोपाईरीफॉस 20 ईसी प्रति लीटर पानी के अनुसार छिड़काव करें।

2. चना में उकठा या उखेड़ा रोग: यह चना की खेती का प्रमुख रोग है। उकठा रोग का प्रमुख कारक फ्यूजेरियम ऑक्सीस्पोरम प्रजाति साइसेरी नामक फफूंद से है। यह सामान्यत: मृदा तथा बीज जनित बीमारी है, जिसकी वजह से 10 से 12 प्रतिशत तक पैदावार में कमी आती है। यह एक दैहिक व्याधि होने के कारण पौधे के जीवनकाल में कभी भी ग्रसित कर सकती है। इस बीमारी के प्रमुख लक्षण निम्नांकित निम्नांकित है:

1. रोग ग्रसित चने के पौधे के ऊपरी हिस्से की पत्तियां और डंठल झुक जाते है।

2. चने का पौधा सूखना शुरू कर देता है और मरने के लक्षण दिखाई देने लगते हैं।

3. सूखने के बाद पत्तियों का रंग भूरा या तांबे जैसा हो जाता है।

4. वयस्क और अंकुरित पौधे कम उम्र में ही मर जाते है एवं भूमि की सतह वाले क्षेत्र में आंतरिक ऊतक भूरे या रंगहीन हो जाते है।

5. यदि तने को लम्बवत चीरा लगाएंगे, तो तम्बाकू के रंग की तरह धारी दिखाई पड़ती है, लेकिन, यह पतली और लंबी धारी तने के ऊपर दिखाई नहीं देती है।

रोकथाम:

1. चने की बुवाई उचित समय पर यानी अक्तूबर से नवम्बर के प्रथम सप्ताह तक करें।

2. गर्मियों में मई से जून में गहरी जुताई करने से फ्यूजेरियम फॅफूंद का संवर्धन कम हो जाता है। मृदा का सौर उपचार करने से भी रोग में कमी आती है।

3. पांच टन प्रति हैक्टेयर की दर से कम्पोस्ट का प्रयोग करें।

4. बीज को मिट्टी में 8 से 10 सैटीमीटर गहराई में गिराने से उखड़ा रोग का प्रभाव कम होता है।

5. एक ग्राम कार्बेन्डाजिम (बाविस्टीन) या कार्बोक्सिन या 2 ग्राम थिराम और 4 ग्राम ट्राइकोडर्मा विरीडि प्रति किलोग्राम चना बीज की दर से बीजोपचार करें। इसी प्रकार 1.5 ग्राम बेन्लेट टी (30 प्रतिशत बेनोमिल तथा 30 प्रतिशत थिराम) प्रति किलोग्राम बीज की दर से बीजोपचार मिट्टी जनित रोगाणुओं को मारने में लाभप्रद है।

6. मिट्टी जनित और बीज जनित रोगों के नियंत्रण हेतु बायोपेस्टीसाइड (जैव कवकनाशी) ट्राईकोडर्मा विरीडी 1 प्रतिशत डब्ल्यू.पी. या ट्राइकोडर्मा हरजिएनम 2 प्रतिशत डब्ल्यू.पी 2.5 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर मात्रा को 60 से 75 किलोग्राम सड़ी हुई गोबर की खाद में मिलाकर हल्के पानी का छींटा देकर 7 से 10 दिन तक छाया में रखने के बाद बुवाई के पूर्व आखिरी जुताई पर भूमि में मिला देने से चने को मिट्टी बीज जनित रोगों से बचाया जा सकता है।

3. शुष्क-मूल विगलन (ड्राई रूट रॉट) : चने का यह मिट्टी जनित रोग है। पौधों में संक्रमण राइजोक्टोनिया बटाटीकोला नामक कवक से फैलता है। मिट्टी में नमी की कमी होने पर और वायु का तापमान 30 डिग्री सैटीग्रेड से अधिक होने पर बीमारी का गंभीर प्रकोप होता है। सामान्यतया इस बीमारी का प्रकोप पौधों में फूल आने और फलियाँ बनते समय होता है। रोग से प्रभावित पौधों की जड़ें अविकसित एवं काली होकर मुड़ने लगती है और आसानी से टूट जाती हैं। संक्रमण अधिक होने पर पूरा पौधा सूख जाता है और रंग भूरे जैसा हो जाता है। जड़ें काली या भंगुर हो जाती हैं और कुछ या नगण्य जड़ें ही बच जाती हैं।

रोकथाम:

1. फसल चक्र अपनायें। चना बीज का फफूंदनाशक द्वारा बीजोपचार करने से बीमारी के शुरूआती विकास को रोका जा सकता है। समय पर बुवाई करें, क्योंकि फूल आने के उपरांत सूखा पड़ने और तीक्ष्ण गर्मी बलाघात से बीमारी का प्रकोप बढ़ता है। सिंचाई द्वारा इस रोग को नियंत्रित किया जा सकता है।

4. स्तम्भ मूल विगलन (कॉलर रॉट): चने में इस रोग का कारक स्क्लेरोशियम रॉल्सी नामक कवक है। इसका प्रकोप आमतौर पर सिंचित क्षेत्रों या बुवाई के समय मिट्टी में नमी की बहुतायत, भू सतह पर कम सड़े हुए कार्बनिक पदार्थ की उपस्थिति, निम्न पी.एच.मान और उच्च तापक्रम 25 से 30 डिग्री सैंटीग्रेड होने पर अधिक होता है। अंकुरण से लेकर एक–डेढ़ महीने की अवस्था तक पौधे पीले होकर मर जाते हैं। जमीन से लगा तना और जड़ की संधि का भाग पतला तथा भूरा होकर सड़ जाता है। तने के सड़े भाग से जड़ तक सफेद फफूंद और कवक के जाल पर सरसों के दाने के आकार के स्क्लेरोशिया (फफूंद के बीजाणु) दिखाई देते हैं।

रोकथाम:

1. फफूंदनाशी द्वारा बीज शाधित करके बुवाई करें।

2. आनाज वाली फसलों जैसे-गेहूं, ज्वार, बाजरा को लंबी अवधि तक फसल चक्र में अपनाएं।

3. बुवाई से पूर्व पिछली फसल के सड़े-गले अवशेष और कम सड़े मलबे को खेत से बाहर निकाल दें।

4. बुवाई और अंकुरण के समय खेत में अधिक नमी नहीं होनी चाहिए।

5. कार्बडाजिम 0.5 प्रतिशत या बेनोमिल 0.5 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें।

5. चाँदी (एस्कोकाइटा ब्लाइट) : चने में एस्कोकाइटा पत्ती धब्बा रोग एस्कोकाइटा रेबि नामक फफूंद द्वारा फैलता है। उच्च आर्द्रता और कम तापमान की स्थिति में यह रोग फसल को क्षति पहुंचाता है। पौधे के निचले हिस्से पर गेरूई रंग के भूरे कत्थई रंग के धब्बे पड़ जाते हैं और संक्रमित पौधा मुरझा कर सूख जाता है। पौधे के धब्बे वाले भाग पर फफूंद के फलनकाय (पिकनीडिया) देखे जा सकते है। ग्रसित पौधे की पत्तियों, फूलों और फलियों पर हल्के भूरे रंग के धब्बे पड़ जाते हैं।

रोकथाम : 1. फसल चक्र अपनाये।

2. चांदनी से प्रभावित या ग्रसित बीज को नहीं उगाएं।

3. गर्मियों में गहरी जुताई करें और ग्रसित फसल अवशेष तथा अन्य घास को नष्ट कर दें।

4. कार्बेडाजिम 50 प्रतिशत और थिराम 50 प्रतिशत 1:2 के अनुपात में 3.0 ग्राम की दर से या ट्राइकोडर्मा 4.0 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से बीज शोधन करें।

5. चना में केप्टान या मेंकोजेब या क्लोरोवेलोनिल 2 से 3 ग्राम प्रति लीटर पानी का 2 से 3 बार छिड़कार करने से रोग को रोक जा सकता है।

6. मोजेक और बोना रोग: मोजेक रोग में ऊपर की फुनगियां मुड़कर सूख जाती है एवं फलन कम होती हैं, जबकि बौना विषाणु रोग में पौधे छोटे, पीले, नारंगी या भूरा दिखाई पड़ते हैं। यह रोग लाही द्वारा स्वस्थ पौधे तक पहुंचाया जाता है। इसके अलावा मिट्टी में लोहे की कमी और लवण

शेष पृष्ठ 10 पर

कम लागत में अधिक लाभ की खेती मशरूम

मशरूम उत्पादन एक कम लागत की खेती है, जिसको भूमि की आवश्यकता नहीं होती है। इसको घर पर छोटे से कमरे में भी उगाया जा सकता है। इसलिए इसको एक उद्योग के रूप में भी अपनाया जा सकता है। मशरूम का उपयोग भोजन के रूप में प्राचीन काल से चला आ रहा है। बेहतर कमाई के लिए मशरूम की खेती एक अच्छा विकल्प है। यह उन खेती में से एक है, जिसके लिए लम्बे–चौड़े खेतों की नहीं, अपितु एक छोटा कमरा ही पर्याप्त है। मशरूम की खेती से होने वाले मुनाफे को देख कर किसान ही नहीं अपितु शहरी युवक व छोटी जोत वाले किसान भी काफी दिलचस्पी दिखा रहे हैं। यही कारण है कि आजकल नये–नये तरीकों से मशरूम की खेती की जा रही है। खाद्य मशरूम की खेती से आज के समय में तीन गुना तक आय हो सकती है, जबकि कुछ औषधीय गुणों वाली मशरूम से यह 6 से 7 गुना तक हो सकती है।

मशरूम एक अच्छे प्रकार का खाद्य पदार्थ तो है ही, साथ ही यह एक अच्छे गुण भी रखती है। इसके सेवन से अनेकों बीमारियां स्वत: ही ठीक होने लगती हैं। इसमें एंटीबायोटिक तत्व भी पाए जाते हैं, जो शरीर को हानिकारक बीमारियों से लड़ने की क्षमता प्रदान करते हैं। साथ ही प्रतिरक्षा तंत्र को मज़बूत बनाते हैं। इसमें एंटी वायरल क्षमता भी पाई जाती है, जो हमारे शरीर को वायरल बुखार से भी बचाती है। इसमें ऐसे तत्व भी पाए जाते हैं, जो खून में कोलेस्ट्रॉल की मात्रा को नियंत्रित करता है। अत: इसके सेवन से हृदय रोगों से भी रक्षा होती है। इसमें फोलिक एसिड नामक तत्व भी पाया जाता है, जो रक्त अल्पता से ग्रसित व्यक्तियों तथा विशेषकर महिलाओं के लिए बहुत लाभकारी है। इसके सेवन से कब्ज़ दूर होती है। पेट साफ होता है तथा खुल कर भूख लगती है। यह प्रोटीन और विटामिन बी12 का एक अच्छा स्त्रोत है। मात्र 3 ग्राम मशरूम के सेवन से एक व्यक्ति की विटामिन बी12 की दैनिक आवश्यकता पूरी हो सकती है। मशरूम एक स्वास्थ्यवर्धक खाद्य पदार्थ है, जो सभी लोगों, बच्चों से लेकर वृद्ध तक के लिए अनुकूल है। इसमें प्रोटीन, रेशा, विटामिन प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। ताज़े मशरूम में 90.1 प्रतिशत पानी, 3.90 प्रतिशत प्रोटीन, 5.0 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट, 0.9 प्रतिशत रेशा होता है। मशरूम में पाए जाने वाला रेशा सुपाच्य होता है। इस प्रकार मशरूम स्वास्थ्य की दृष्टि से बहुत ही गुणकारी खाद्य पदार्थ है।

विश्व में मशरूम की मांग : इसके पोषकीय एवं औषधीय गुणों के कारण सम्पूर्ण विश्व में इसकी खपत दिन प्रति दिन बढ़ती जा रही है। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर इसकी मांग 5 प्रतिशत वार्षिक की दर से बढ़ रही है। गत् तीन दशकों में मशरूम की खपत अंतरराष्ट्रीय स्तर पर 10 से 15 प्रतिशत की वृद्धि देखी गई है। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मशरूम जैविक खाद्य के रूप में इतनी लोकप्रिय हुई है कि आज विश्व में मशरूम का जितना उत्पादन है, उससे कहीं ज्यादा उसकी मांग है।

कब और कहां प्रारम्भ हुई इसकी खेती : विश्व में मशरूम की खेती प्राचीन काल से होती आ रही है। किन्तु आधुनिक तरीके से इसकी खेती सर्वप्रथम फ्रांस में प्रारम्भ हुई तथा भारत में सबसे पहले 1961 में हिमाचल प्रदेश में मशरूम की खेती की शुरूआत की गई और 1961 के बाद से इसका प्रचार-प्रसार बढ़ता ही गया। 1980 के पूर्व मशरूम की खेती मात्र पर्वतीय क्षेत्रों तक ही सीमित थी, परन्तु अब इसकी खेती मैदानी क्षेत्रों में व्यापक तथा व्यापारिक स्तर पर की जाने लगी है।

मशरूम की प्रजातियां : मशरूम की प्रजातियों को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है :

1. खायी जाने वाली मशरूम
2. औषधि गुणों वाली मशरूम

भारत में खाई जाने वाली मशरूम की कई प्रजातियां उगाई जाती हैं, परन्तु भारतीय वातावरण में चार प्रकार की मशरूम की प्रजातियां व्यापक तौर पर उगाई जा सकती हैं। इसमें प्रमुख बटन मशरूम, मिल्की मशरूम, ऑस्टर मशरूम (ढींगरी), पुआल मशरूम हैं। औषधीय मशरूम में मुख्यत: गायनोडर्मा, कीड़ा जड़ी, सिटाके आदि प्रमुख हैं।

उगाने का समय : बटन मशरूम की खेती के लिए सर्दी का समय सबसे उपयुक्त माना जाता है। वरन् मिल्की मशरूम के लिए गर्मी का मौसम उपयुक्त होता है, जबकि दूसरी तरफ क्रमश: पुआल मशरूम को वर्षा ऋतु में तथा ऑस्टर मशरूम को वर्ष भर उगाया जा सकता है। मशरूम की अलग-अलग प्रजातियों को अलग-अलग मौसम में उगाया जाता है। ऑस्टर मशरूम की खेती आर्थिक दृष्टि से ज्यादा लाभकारी होती है, क्योंकि इसकी खेती सरल व कम लागत की होती है, यह लागत का तीन गुणा लाभ देता है।

मशरूम को उगाने की विधि : मशरूम एक अंधेरे कमरे में उगाई जाने वाली फसल है, जिसको भूमि की आवश्यकता नहीं होती है। इसको पक्के, कच्चे मकानों व झोपड़ी में सुरक्षित उगाया जा सकता है। मशरूम को उगाने के लिए किसी विशेष प्रकार के पोषक तत्व व उर्वरक की आवश्यकता नहीं होती है, जोकि इसकी उगाई जाने वाली लागत को कम कर देती है। इसे फसलों के अवशेषों जैसे भूसा, पुआल तथा पेड़ों की सूखी पत्तियों पर उगाया जा सकता है। मशरूम की खेती में ध्यान देने वाली बात यह है कि उगाए जाने वाला कमरा या झोपड़ी चारों ओर से बंद हो, किन्तु इसमें हवा आने-जाने के लिए एक दरवाजा व एक खिड़की आमने-सामने होने चाहिए, जिससे कि कमरे के ताप को नियंत्रित किया जा सके। उचित ताप व आर्द्रता (नमी) के द्वारा मशरूम की किसी भी प्रजाति को आसानी से उगाया जा सकता है। उचित नमी बनाए रखने के लिए उगाए जाने वाले कमरे में पानी को स्प्रे मशीन से छिड़कना अच्छा रहता है।

मशरूम की पैदावार एवं भंडारण : सामान्यत: 8 से 9 किलोग्राम मशरूम प्रति वर्ग मीटर में पैदावार होती है। 100 किलोग्राम कम्पोस्ट से लगभग 12 किलोग्राम बटन मशरूम आसानी से प्राप्त हो जाती है, जबकि 1 किलोग्राम भूसे से 600-700 ग्राम ऑस्टर मशरूम प्राप्त हो जाती है। मशरूम तोड़ने के बाद साफ पानी से अच्छी तरह धोयें तथा बाद में 25-30 मिनट के लिए ठंडे पानी में भिगो दें। मशरूम ताज़ा ही प्रयोग करना श्रेष्ठ माना जाता है, किन्तु फ्रिज में 5 डिग्री ताप पर 45 दिन के लिए इनका भंडारण भी किया जा सकता है। साथ ही धूप में सुखाकर भी इनका भंडारण किया जा सकता है। आजकल मशरूम को सुखाने के लिए मशीनों का प्रयोग भी किया जा रहा है, जिससे इसका रंग व खुशबू दोनों सामान्य ही बने रहते हैं। सूखने के बाद इसे डिब्बे या पॉलीथीन के छोटे-छोटे पैकेटों के रूप में पैक करके 6-12 माह के लिए आसानी से रखा जा सकता है, जिसका उपयोग आगे चल कर सब्ज़ी व अन्य खाद्य पदार्थों के रूप में किया जा सकता है। मशरूम को आचार के रूप में भी संरक्षित किया जा सकता है। साथ ही इसको 12 प्रतिशत नमक के घोल में भी सुरक्षित रखा जा सकता है।

क्यों है लाभकारी खेती : मशरूम की खेती एक ऐसा व्यवसाय है, जिसमें ना तो भूमि की आवश्यकता है और ना ही अधिक धन की, साथ ही इसमें अधिक पढ़े-लिखे होने की भी आवश्यकता नहीं है। इसे बच्चे, बूढ़े, महिलाएं और कम पढ़े-लिखे बेरोज़गार नवयुवक कोई भी आसानी से उगा सकता है। इसके द्वारा होने वाली आय लगाई गई पूंजी का 3 गुणा तक हो सकती है, जबकि औषधीय गुण वाली मशरूम की खेती से तो यह और भी अधिक हो सकती है।

वातावरण के लिए लाभकारी : मशरूम की खेती वातावरण के लिए लाभकारी है, क्योंकि यह फसलों तथा पेड़-पौधों के बचे हुए अवशेषों पर उगा कर उन्हें सड़ाने-गलाने में अहम् भूमिका निभाती है। यह खेतों में बचे हुए फसलों के अवशेषों का उपयोग करके उनके द्वारा होने वाले वातावरण प्रदूषण को भी कम करने में अहम् योगदान देती है।

धान की पुआल को तथा गन्ने की सूखी पत्तियों को व अन्य फसलों के अवशेषों को जलाने के स्थान पर इसकी खेती के लिए उपयोग किया जा सकता है, जिससे वातावरण में वायु प्रदूषण को कम किया जा सकता है।

शेष पृष्ठ 9 की

चने के प्रमुख रोग एवं उनका निदान

की अधिकता भी पौधे में रोग के लक्षण के रूप में प्रकट होते हैं, जो समान रूप से नजर नहीं आते हैं।

रोकथाम:

1. विषाणु रोग के फैलाव को रोकने के लिए लाही कीट का नियंत्रण हेतु एलो-स्टीकी-ट्रैप (पीला फंदा) एक हैक्टेयर में 20 फंदा लगायें।

2. यदि इस कीट का पौधों पर एक समूह बन गया हो, तो किसी अन्तव्यापि कीटनाशी का छिड़काव करना चाहिए।

समेकित नाशीजीव प्रबंधन:

1. यांत्रिक प्रबंधन:

* फली भेदक कीट की निगरानी हेतु 5 फेरोमोन ट्रेप/हैक्टेयर का प्रयोग करना चाहिए। फेरोमोन ट्रेप में 4-5 नर पतंगे/ट्रेप/रात्रि आ जाने पर सामान्यत: 14 दिन पश्चात कीट की संख्या आर्थिक हानि स्तर तक पहुंच जाती है। हेलिकोवेरपा कीट के संदर्भ में संख्या आर्थिक हानि स्तर 1 सूंडी प्रति 1. 5 मीटर फसल लाइन है या 5 प्रतिशत ग्रसित फली या 8-10 मौथ/ट्रेप/लगातार 3 रात्रि तक। इस कीट का नियंत्रण कीट के आर्थिक हानि स्तर पर पहुंचते ही तुरंत कर देना चाहिए अन्यथा कीट की संख्या आर्थिक हानि स्तर से अधिक हो जाने पर कीट नियंत्रण की लागत अत्यधिक हो सकती है। अत: जैसे ही आर्थिक हानि स्तर आता है उसी समय कीट नियंत्रण की विधियां अपनाना लाभकारी होता है।

* नियंत्रण फसल की निगरानी करने से उकठा एवं सड़न से प्रभावित पौधों का पता प्रारंभिक अवस्था में ही लग जाता है, जिससे समय पर सही रसायनिक दवाओं के प्रयोग हेतु चुनाव में आसानी रहती है तथा मित्रकीट की संख्या का स्तर भी सही बना रहता है।

2. जैविक कीट प्रबंधन:

* चने के रोगों के रोकथाम के लिए सूक्ष्मजीव जीवनाशक जैसे ट्राईकोडर्मा एवं सूडोमोनास का उपयोग बीजोपचार के लिए करना चाहिए।

* खेतों में एनपीवी, बीटी का प्रयोग करें। एचएएनपवी / 250 एल / ई / हैक्टेयर (1×1, पीओबी) अकेले या टिनोपाल (0.1 प्रतिशत पराबैंगनी किरणों के प्रभाव को रोकने के लिए) उपयोग करना चाहिए। अन्य समय के अपेक्षा शाम के समय छिड़काव करने से अधिक प्रभावी होता है। बीटी

फार्मूलेशन का 1.0-1.5 किलोग्राम / हैक्टेयर के हिसाब से छिड़काव करना चाहिए।

* इस फसल में प्राकृतिक शत्रु का अध्ययन मुख्यत: हेलिकोवर्पा पर केन्द्रित है। अंडा पारासिटाइड ट्राईकोग्रामा इस फसल पर अम्ल की उपस्थिति के कारण नहीं मिलते हैं। कैम्पोलेटिस क्लोरिडी, यूसेलाटोनिया ब्रायेनी और कारसेलिया इलोटा के साथ जैव नियंत्रण में सीमित सफलता प्राप्त हुई है। खेतों में एनवीपी एवं बीटी हेलिकोवर्पा के नियंत्रण में कारगर पाए गए हैं।

3. रसायनिक प्रबंधन:

आर्थिक दृष्टि से संभव हो, तो नये एवं प्रभावकारी कीटनाशकों का उपयोग करना चाहिए। कीटनाशकों के कई समूह प्रमुख कीटों के खिलाफ कीटनाशकों का संयोजन प्रभावी पाए गए हैं। प्रतिरोधी उत्पन्नता, पुनरुत्थान और द्वितीयक प्रकोपों के कारण कीटनाशकों का संयोजन प्रभावी पाया गया है, विशेषकर नीम पर आधारित कीटनाशकों, जैविक कीटनाशकों जैसे बीटी और एनपीवी का सम्मिलित प्रभाव होता है। हांलाकि उनके विवेकहीन उपयोगों से उनके प्रभाव को कम कर दिया है। इमामेक्टीन 0.02 प्रतिशत के हिसाब पहली बार फूल खिलने के प्रारंभिक अवस्था में और दूसरी बार 15 दिनों के पश्चात छिड़काव से फली छेदक का प्रकोप रूक जाता है। इसके अलावा साइप्रमेथ्रिन या क्लोरोपाइरिफॉस या फेनवलरेट का भी प्रयोग कर सकते हैं।

जलवायु परिवर्तन का असर

समुद्री पानी के गर्म होने से बढ़ता चक्रवाती कहर

पंकज चतुर्वेदी

जलवायु बदलावों के चलते चक्रवाती तूफानों की संख्या में वृद्धि हुई है। वैज्ञानिकों के अनुसार, हिंद महासागर के गर्म होने के कारण चक्रवातों की गति व मजबूती बढ़ी है। यह बात नासा के अध्ययन में भी सामने आयी। यदि संसाधनों के अंधाधुंध दोहन पर काबू नहीं किया तो साइक्लोन तटीय शहरों में तबाही लाते रहेंगे।

सत्ताईस नवंबर तक भारत के दक्षिणी राज्यों में सेनयार चक्रवात ने भारी तबाही मचाई थी और अगले दिन दितवाह ने अपना कहर शुरू कर दिया। तमिलनाडु में तीन लोगों की मौत, 57 हजार हेक्टेयर फसल नष्ट होना और अनगिनत घरों का उजड़ना इसके परिणाम रहे। आंध्र प्रदेश, पुडुचेरी और तमिलनाडु में जलभराव ने जनजीवन को अस्त-व्यस्त किया। सबसे बड़ी मार किसानों पर पड़ी है, क्योंकि उत्तर-पूर्वी मानसून के कारण धान, गन्ना और अन्य फसलें कटाई के करीब थीं, जिन्हें भारी बारिश ने गिरा दिया। यदि 48 घंटे में धान न कटे तो वे सड़ जाएंगे, और खेतों में पानी भरने के कारण यह कार्य संभव नहीं है।

दुनिया में तेजी से आ रहे प्राकृतिक बदलावों ने ऐसे तूफानों की संख्या में वृद्धि की है। यदि मानव ने प्रकृति के साथ छेड़छाड़ को नियंत्रित नहीं किया तो साइक्लोन या बवंडर के चलते भारत के सागर किनारे वाले शहरों में लोगों का जीना दूभर हो जाएगा। वैज्ञानिकों के अनुसार, पिछले 30 वर्षों के दौरान तूफानों की तीव्रता में बढ़ोतरी देखी गई है। हिंद महासागर के गर्म होने के कारण चक्रवातों की गति व मजबूती बढ़ी है। भारतीय मौसम विभाग के अनुसार, पिछले पांच सालों (करीब 2018-2022) में तूफानों की घटनाओं में 32 प्रतिशत इजाफा हुआ। पिछले तीन माह में यह चौथा विकराल चक्रवात है। यही नहीं, मई से जुलाई तक कई कम क्षमता के चक्रवातों ने पश्चिम बंगाल, कोंकण, गुजरात आदि में कोहराम मचाया था।

इस तरह के बवंडर तात्कालिक नुकसान ही नहीं पहुंचाते, बल्कि इनका दीर्घकालिक प्रभाव पर्यावरण पर पड़ता है। इसके साथ ही, समूची प्रकृति का संतुलन बिगड़ता है। वनों या पेड़ों को संपूर्ण स्वरूप पाने में दशकों लगे, वे पलक झपकते नेस्तनाबूद हो जाते हैं। तेज हवा के कारण तटीय क्षेत्रों में मीठे पानी में खारा पानी मिलने और खेती वाली जमीन पर मिट्टी व दलदल बनने से हुई क्षति पूरा करना मुश्किल होता है।

वर्ष 2019 में जारी आईपीसीसी की रिपोर्ट 'ओशन एंड क्रायोस्फीयर इन ए चेंजिंग क्लाइमेट' के अनुसार, सारी दुनिया के महासागर 1970 से ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन से उत्पन्न 90 फीसदी अतिरिक्त गर्मी को अवशोषित कर चुके हैं। इसके कारण महासागर गर्म हो रहे हैं और इसी से चक्रवात का शीघ्र और भयंकर चेहरा सामने आ रहा है। निवार तूफान के पहले बंगाल की खाड़ी में जलवायु परिवर्तन के चलते समुद्र का जल सामान्य से अधिक गर्म हो गया था। उस समय समुद्र की सतह का तापमान औसत से लगभग 0.5-1 डिग्री सेल्सियस अधिक गर्म था, कुछ क्षेत्रों में यह सामान्य से लगभग 1.2 डिग्री सेल्सियस अधिक दर्ज किया गया था। बता दें कि समुद्र का 0.1 डिग्री तापमान बढ़ने का अर्थ है चक्रवात को अतिरिक्त ऊर्जा मिलना। हवा की विशाल मात्रा के तेजी से गोल-गोल घूमने पर उत्पन्न तूफान उष्णकटिबंधीय चक्रीय बवंडर कहलाता है।

पृथ्वी भौगोलिक रूप से दो गोलार्धों में विभाजित है। ठंडे या बर्फ वाले उत्तरी गोलार्ध में उत्पन्न इस तरह के तूफानों को हरिकेन या टाइफून कहते हैं। इनमें हवा का घूर्णन घड़ी की सुइयों के विपरीत दिशा में एक वृत्ताकार रूप में होता है। जब बहुत तेज हवाओं वाले उग्र आंधी तूफान अपने साथ मूसलधार वर्षा लाते हैं तो उन्हें हरिकेन कहते हैं। जबकि भारत के हिस्से दक्षिणी अर्धगोलार्ध में इन्हें चक्रवात या साइक्लोन कहा जाता है। इस तरफ हवा का घुमाव घड़ी की सुइयों की दिशा में वृत्ताकार होता है। किसी भी उष्णकटिबंधीय अंधड़ को चक्रवाती तूफान की श्रेणी में तब गिना जाने लगता है जब उसकी गति कम से कम 74 मील प्रति घंटे हो जाती है। ये बवंडर कई परमाणु बमों के बराबर ऊर्जा पैदा करने की क्षमता वाले होते हैं।

भारतीय उपमहाद्वीप में बार-बार और हर बार पहले से घातक तूफान आने का वास्तविक कारण मानव द्वारा किए जा रहे प्रकृति के अंधाधुंध दोहन से उपजी पर्यावरणीय त्रासदी 'जलवायु परिवर्तन' भी है। इस साल के प्रारंभ में ही अमेरिका की अंतरिक्ष शोध संस्था नासा ने चेता दिया था कि जलवायु परिवर्तन के बढ़ते प्रकोप से चक्रवाती तूफान और तीव्र होते जाएंगे। जलवायु परिवर्तन के कारण उष्णकटिबंधीय महासागरों का तापमान बढ़ने से सदी के अंत में बारिश के साथ भयंकर बारिश और तूफान आने की दर बढ़ सकती है। यह बात नासा के एक अध्ययन में सामने आई है। अमेरिका में नासा के जेट प्रोपल्शन लेबोरेटरी यानी जेपीएल के नेतृत्व में यह अध्ययन किया गया। इसमें औसत समुद्री सतह के तापमान और गंभीर तूफानों की शुरुआत के बीच संबंधों को निर्धारित करने के लिए उष्णकटिबंधीय महासागरों के ऊपर नासा के वायुमंडलीय इन्फ्रारेड साउंडर (एआईआरएस) उपकरणों द्वारा 15 सालों तक एकत्र आंकड़ों के आकलन से यह बात सामने आई।

अध्ययन में पाया गया कि समुद्र की सतह का तापमान लगभग 28 डिग्री सेल्सियस से अधिक होने पर गंभीर तूफान आते हैं। 'जियोफिजिकल रिसर्च लेटर्स' (फरवरी, 2019) में प्रकाशित अध्ययन में, समुद्र की सतह के तापमान में वृद्धि के कारण हर एक डिग्री सेल्सियस पर 21 प्रतिशत अधिक तूफान आते हैं। 'जेपीएल' के साइंटिस्ट हार्टमुट औमन के मुताबिक गर्म वातावरण में गंभीर तूफान बढ़ जाते हैं। भारी बारिश के साथ तूफान आमतौर पर साल के सबसे गर्म मौसम में ही आते हैं। लेकिन जिस तरह इस साल बरसात और सर्दियों में भारत में ऐसे तूफान के हमले बढ़े हैं, यह हमारे लिए गंभीर चेतावनी है।

किसानों की आय और खाद्य सुरक्षा को सशक्त अभियान

भारत एक कृषि प्रधान देश है, जहां की बड़ी आबादी प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से खेती पर निर्भर है। देश की अर्थव्यवस्था, ग्रामीण रोजगार और खाद्य उपलब्धता का आधार कृषि ही है। बढ़ती जनसंख्या, घटती कृषि भूमि, जलवायु परिवर्तन और उत्पादन लागत में वृद्धि जैसी चुनौतियों के बीच किसानों की आय बढ़ाना और देश की खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करना सरकार के लिए एक बड़ी प्राथमिकता रहा है। इन्हीं उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए नैशनल फूड सिक्योरिडी मिशन (NFSM) की शुरुआत की गई, जो आज किसानों की आय बढ़ाने और खाद्य सुरक्षा को सशक्त करने वाला एक महत्वपूर्ण अभियान बन चुका है।

नैशनल फूड सिक्योरिडी मिशन (NFSM) की शुरुआत केंद्र सरकार द्वारा वर्ष 2007-08 में की गई थी। इस मिशन का मुख्य उद्देश्य देश में चावल, गेहूं, दलहन और मोटे अनाजों (श्री अन्न) के उत्पादन में सतत वृद्धि सुनिश्चित करना है। NFSM केवल उत्पादन बढ़ाने तक सीमित नहीं है, बल्कि यह फसल उत्पादकता, भूमि की उर्वरता, जल और अन्य संसाधनों के कुशल उपयोग तथा किसानों की आर्थिक स्थिति को मजबूत करने पर भी केंद्रित है। इसके माध्यम से किसानों को आधुनिक कृषि तकनीक, प्रमाणित बीज, उर्वरक और प्रशिक्षण उपलब्ध कराए जाते हैं, जिससे उनकी आय बढ़ती है और कृषि अधिक टिकाऊ बनती है। यह मिशन देश को खाद्यान्न सुरक्षा की दृष्टि से आत्मनिर्भर बनाने में एक महत्वपूर्ण और सशक्त कदम माना जाता है।

नैशनल फूड सिक्योरिडी मिशन के प्रमुख उद्देश्य

नैशनल फूड सिक्योरिडी मिशन (NFSM) के अंतर्गत कई स्पष्ट और व्यावहारिक लक्ष्य निर्धारित किए गए हैं। इनमें प्रमुख रूप से खाद्यान्न उत्पादन में वृद्धि करना, प्रति हेक्टेयर उपज को बढ़ाना, कृषि योग्य क्षेत्रों का विस्तार करना और किसानों को आधुनिक कृषि तकनीकों से जोड़ना शामिल है। इसके साथ ही, दलहन और मोटे अनाजों को बढ़ावा देकर पोषण सुरक्षा को मजबूत करना भी नैशनल फूड सिक्योरिडी मिशन (NFSM) का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य है। मिशन के तहत किसानों को प्रशिक्षण, प्रमाणित बीज, उर्वरक और आधुनिक उपकरण उपलब्ध कराए जाते हैं, जिससे उनकी उत्पादकता और आय में सुधार होता है। इस तरह, नैशनल फूड सिक्योरिडी मिशन (NFSM) न केवल खाद्य उत्पादन और किसानों की आय बढ़ाने में सहायक है, बल्कि ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ और टिकाऊ बनाने में भी निर्णायक भूमिका निभाता है।

किसानों की आय बढ़ाने में नैशनल फूड सिक्योरिडी मिशन (NFSM) की भूमिका

किसानों की आय बढ़ाना नैशनल फूड सिक्योरिडी मिशन (NFSM) का एक केंद्रीय लक्ष्य है। इसके तहत किसानों को उन्नत और प्रमाणित बीज उपलब्ध कराए जाते हैं, जिससे फसल की गुणवत्ता और उत्पादन दोनों में सुधार होता है। आधुनिक कृषि उपकरणों, मशीनरी और तकनीकों पर अनुदान देकर खेती की लागत को कम किया जाता है। छैह्ड के अंतर्गत फसल विविधीकरण को भी प्रोत्साहन दिया जाता है, जिससे किसान केवल एक ही फसल पर निर्भर न रहें और जोखिम कम हो। दलहन और मोटे अनाजों की खेती से कम लागत में बेहतर लाभ प्राप्त होता है, जिससे किसानों की शुद्ध आय बढ़ती है।

देश की बढ़ती आबादी के लिए पर्याप्त और सुरक्षित खाद्यान्न उपलब्ध कराना एक बड़ी चुनौती है। नैशनल फूड सिक्योरिडी मिशन (NFSM) इस दिशा में अहम भूमिका निभाता है। चावल और गेहूं जैसी प्रमुख खाद्यान्न फसलों के उत्पादन में वृद्धि से सार्वजनिक वितरण प्रणाली (PDS) को मजबूती मिलती है। दलहन और मोटे अनाजों को बढ़ावा देकर NFSM न केवल खाद्य सुरक्षा बल्कि पोषण सुरक्षा को भी सुदृढ़ करता है। मोटे अनाज जैसे बाजरा, ज्वार और रागी पोषक तत्वों से भरपूर होते हैं और जलवायु के प्रति अधिक सहनशील भी होते हैं, जिससे टिकाऊ कृषि को बढ़ावा मिलता है।

उन्नत तकनीक और प्रशिक्षण का महत्व

नैशनल फूड सिक्योरिडी मिशन (NFSM) के तहत किसानों को आधुनिक कृषि तकनीकों से अवगत कराने के लिए प्रशिक्षण और जागरूकता कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं। इसमें मृदा परीक्षण, संतुलित उर्वरक उपयोग, जल संरक्षण तकनीक, सूक्ष्म सिंचाई और एकीकृत कीट प्रबंधन जैसी विधियों को अपनाने के लिए किसानों को प्रोत्साहित किया जाता है। ये प्रयास न केवल फसल उत्पादन बढ़ाने में मदद करते हैं, बल्कि प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण को भी सुनिश्चित करते हैं। इससे खेती अधिक टिकाऊ, पर्यावरण के अनुकूल और आर्थिक रूप से लाभकारी बनती है, जो किसानों की आय और ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सशक्त करती है।

जलवायु परिवर्तन और नैशनल फूड सिक्योरिडी मिशन (NFSM)

जलवायु परिवर्तन आज कृषि क्षेत्र के लिए एक गंभीर चुनौती बन चुका है। अनियमित वर्षा, सूखा और तापमान में बदलाव फसल उत्पादन को प्रभावित करते हैं। नैशनल फूड सिक्योरिडी मिशन (NFSM) जलवायु-अनुकूल कृषि पद्धतियों को बढ़ावा देकर इस चुनौती से निपटने में मदद करता है। कम पानी में उगने वाली फसलें, सूखा-सहिष्णु किस्में और मोटे अनाजों को प्रोत्साहन देकर नैशनल फूड सिक्योरिडी मिशन (NFSM) किसानों को बदलते मौसम के अनुरूप खेती करने में सक्षम बनाता है।

ग्रामीण विकास और रोजगार सृजन

नैशनल फूड सिक्योरिडी मिशन (NFSM) केवल कृषि उत्पादन बढ़ाने तक सीमित नहीं है, बल्कि यह ग्रामीण विकास और रोजगार सृजन में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। फसलों के बेहतर उत्पादन से कृषि आधारित उद्योगों जैसे प्रसंस्करण, भंडारण और परिवहन को बढ़ावा मिलता है, जिससे ग्रामीण क्षेत्रों में नए रोजगार के अवसर सृजित होते हैं। जब किसानों की आय में वृद्धि होती है, तो उनकी क्रय शक्ति भी बढ़ती है, जिससे वे शिक्षा, स्वास्थ्य और अन्य आवश्यक सेवाओं पर अधिक खर्च कर पाते हैं। इसका सकारात्मक प्रभाव पूरे ग्रामीण अर्थतंत्र पर पड़ता है और गांवों का समग्र विकास सुनिश्चित होता है।

मानसा के 3 दोस्तों ने गडवासू से ट्रेनिंग ले झींगापालन में तलाशी सफलता की मंजिल

पहले पढ़ाई, फिर झींगा पालन से हर साल 5-5 लाख रुपए कमाई

बात 2022 की है। मानसा के 3 बेरोज़गार दोस्तों ने सूअर पालन की कोशिश की, पर नतीजा सही नहीं निकला। ऐसे में उनकी बेचैनी उन्हें क्षेत्र के ज्ञाना गांव स्थित एक झींगा प्लांट तक लेकर गई। अब वे तीनों झींगा पालन से प्रति वर्ष औसत 5-5 लाख रुपए का मुनाफा कमा रहे हैं। वे साल में दो लोगों को 4-5 महीने के लिए रोज़गार देते हैं।

यह कहानी बाजेवाला गांव के हरप्रीत सिंह और मीरपुर कलां के हरप्रीत सिंह एवं हरपाल सिंह की है। तीनों करीब 27 साल के हैं। सरदूलगढ़ के कॉलेज में बी.ए. की पढ़ाई करते हुए, इनकी दोस्ती गाढ़ी हुई। बाजेवाला का हरप्रीत एल.एल.बी. है। मीरपुर कलां का हरपाल सिंह इसका ममेरा भाई और इसी गांव का हरप्रीत सिंह राजनीति शास्त्र में एम.ए. पास हैं।

तीनों तलवंडी के पास ज्ञाना गांव गए, जहां इन्होंने झींगा पालन का काम देखा। इन्होंने इसके बारे में पूरी जानकारी ली। फिर बाजेवाला के हरप्रीत सिंह ने 2022 में लुधियाना स्थित गडवासू से ऑनलाइन ट्रेनिंग ली। अन्य दोनों ने भी इसका लाभ लिया। फिर बाजेवाला में उसकी ढाई एकड़ ज़मीन में झींगा पालन प्लांट स्थापित किया गया, जिस पर करीब 26 लाख रुपए का खर्च आया। अब यह 6.5 एकड़ में फैल चुका है, जिसमें छह तालाब हैं। इन लोगों ने वर्ष 2023 में मुक्तसर केन्द्र से पांच दिन का प्रशिक्षण हासिल किया।

हरप्रीत के अनुसार, तीनों दोस्तों को सालाना औसत 5-5 लाख रुपए का मुनाफा होता है। उनका प्लांट साल में अक्तूबर से अप्रैल की समय अवधि के लिए बंद रहता है। इस दौरान प्लांट की अच्छे से साफ-सफाई की जाती है। मई से सितम्बर तक काम का सीज़न होता है। चेन्नई और आंध्र प्रदेश से सालाना 7-8 लाख रुपए का बीज लाकर तालाबों में डाला जाता है। झींगा विकसित होने के लिए 120 से 125 दिन का समय लगता है। इस दौरान इनका पालन-पोषण करने के लिए 24 घंटे लाइट का प्रबंध जरूरी है। इसके लिए फॉर्म में एक बड़े जनरेटर की व्यवस्था की गई है। झींगा तैयार होने पर आंध्र प्रदेश, कोलकाता, चंडीगढ़ और दिल्ली में ऑर्डर पर बेचते हैं। मीरपुर कलां के हरप्रीत कहते हैं, एक एकड़ में कम से कम 2.5 टन झींगा उत्पादन होता है। झींगा का भाव 350-400 रुपए प्रति किलोग्राम है। युवाओं को बाहर जाने की बजाय यहीं रह कर काम करना चाहिए। खैर, तीनों दोस्त खेतीबाड़ी भी करते हैं।

कृषि एवं कृषि संबंधित विषयों पर आधुनिक जानकारी लेने हेतु पढ़ें

खेती संदेश

हिन्दी साप्ताहिक समाचार पत्र

कृषि एवं कृषि सहायक धंधों की आधुनिक जानकारी से भरपूर

एक वर्ष में 52 अंक

किसान भाईयों व डीलर/डिस्ट्रीब्यूटरों के लिए

चंदों में विशेष छूट

एक वर्ष 400/- रुपए | दो वर्ष 700/- रुपए

पेमेंट करने के पश्चात् अपना डाक पता इस नंबर पर भेजें :

90410-14575

KHETI DUNIYAN
TID - 62763351

चंदे भेजने हेतु QR कोड सकैन करें।

खेती संदेश (कृषि साप्ताहिक)

के.डी. कॉम्पलैक्स, गऊशाला रोड, पटियाला

के.वी.के., गुरुग्राम ने किया मशरूम उत्पादन तकनीकी पर पांच दिवसीय प्रशिक्षण का आयोजन

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा के गुरुग्राम के शिकोहपुर स्थित कृषि विज्ञान केंद्र द्वारा मशरूम उत्पादन तकनीकी पर पांच दिवसीय प्रशिक्षण कार्यक्रम का आयोजन किया गया जिसमें गुरुग्राम व झज्जर जिले के 12 प्रक्षिणार्थियों ने भाग लिया। प्रशिक्षण कार्यक्रम के संयोजक व केंद्र के विशेषज्ञ डॉ. भरतसिंह ने जानकारी दी कि क्षेत्र के कृषकों में मशरूम की खेती के प्रति विशेष रुची देखी जा रही जिसे कृषि खेती कार्यों के साथ आशानी पूर्वक किया जा सकता है।

प्रशिक्षण में भाग ले रहे व्यक्तियों को मशरूम ग्रह निर्माण, कम्पोस्ट, केसिंग मिट्टी तैयार करने की विधि, इसके निर्जलीकरण, मशरूम ग्रह में नमी व तापक्रम प्रबंधन, स्पानिंग इत्यादि तकनीकों के साथ साथ, मशरूम हार्वेस्टिंग, पैकेजिंग, मार्केटिंग की विस्तार पूर्वक जानकारी दी गई।

इस दौरान विशेषज्ञ डॉ. भरत सिंह ने कहा कि मशरूम की खेती के लिए कम लागत से मशरूम ग्रह तैयार कर प्राकृतिक रुप से मौसम आधारित वर्ष में 2-3 बार विशेषकर मशरूम की फसल ली जा सकती है जबकि उच्च तकनीकी युक्त मशरुम गृह निर्माण कर वर्ष में 4-5 बार मशरूम फसलें जैसे श्वेत बटन मशरुम, ढिंगरी मशरुम, दूधिया मशरुम की फसलें लगाकर आमदनी अर्जित की जा सकती है। कम लागत से मशरुम गृह बनाने के लिए समतल तथा ऊंची उठी हुई जगह, जहां पर पानी का भराव न होता हो वहां पर फसलों के अवशेषों जैसे ज्वार, बाजरा, मक्का, धान सरकंडा/मूंज के सूखे पूलों व फूंस से झोंपड़ीनुमा मशरूम घर तैयार कर उसके अंदर अलग अलग ऊंचाइयों पर बांस, पॉलीथीन व सुतली का इस्तेमाल कर 3-5 सतहों के रैक तैयार किए जाते हैं। जिन पर गेंहू, जौ या धान के भूसे बनी मशरुम कंपोस्ट में मशरुम बीज जिसे स्पॉन कहते है उसे मिला दिया जाता है। अब इसे साफ कागज या पारदर्शी व पतली पॉलीथीन से 10-12 दिनों के लिए ढक दिया जाता है, जब पूरी तरह मशरुम जाल ६ माइसीलियम जाल फैल जाने पर विषेश रूप से तैयार की गई केसिंग मिट्टी 1-1.5 इंच ऊपर से परत चढ़ा दी जाती है। इस प्रक्रिया के 12-15 दिन बाद विशेष रूप से श्वेत बटन मशरुम कटाई कर उपज एवं आमदनी प्राप्त होने लगती है। श्वेत बटन मशरुम की खेती के लिए सितम्बर से फरवरी तक का मौसम अनूकूल रहता है। अलग अलग मौसम के अनुसार मार्केट में मशरूम के भाव में उतार चढाव जो कि 100 रुपए से लेकर 400 रुपए प्रति किलोग्राम या इससे भी अधिक देखा जा सकता है। जबकि वर्षभर मार्किट में ताजा मशरुम की हमेशा मांग बनी रहती है। ठीक उसी तरह ढिंगरी एवं दूधिया मशरुम की खेती से भी मांग व मार्केट की आवश्यकतानुसार उत्पादन कर अच्छा मुनाफा कमाया जा सकता है।